अध्याय चार

धर्मसुधार आंदोलन

पारंपरिक अर्थ में धर्मसुधार आंदोलन का आशय यूरोप में रोमन कैथोलिक चर्च के विभाजन या विच्छेद और प्रोटेस्टेंट ईसाइयत के एक अलग संप्रदाय निर्माण से है। यह चर्च सदियों से पोप के अधीन था। ईसाई धर्म के संगठन का यह विभाजन धर्मसुधार आंदोलन का केवल एक हिस्सा था। इसके परिणामस्वरूप ईसाई धर्म के भीतर अनेक उग्र और नरमपंथी संप्रदायों का निर्माण हुआ जैसे लूथरंस, केल्विनिस्ट्स, प्युरिटंस, एनाबैप्टिस्ट, एंगलीकंस, प्रेस्बिटेरियंस आदि। साथ ही कैथोलिकों ने प्रति-सुधार आंदोलन के जरिए अपने धर्म में सुधार के प्रयास किए। इससे अधिक महत्वपूर्ण सामाजिक और आर्थिक मामलों के बारे में लोगों की धार्मिक संवेदनाओं और सोच में आए व्यापक परिवर्तन थे। धर्मसुधार आंदोलन में कई क्षेत्र शामिल थे—चर्च और समाज की नैतिकता और संरचनाओं दोनों में सुधार, ईसाई आध्यात्मिकता की पुनर्व्याख्या और इसके सिद्धांतों में सुधार। धर्मसुधार आंदोलनों की बहुलता को केवल धार्मिक संदर्भ में पूरी तरह नहीं समझा जा सकता। अत: हम देख सकते हैं कि धर्मसुधार आंदोलन महज रोमन कैथोलिक चर्च में व्याप्त बुराइयों के खिलाफ ही आंदोलन नहीं था। यह उस जटिल स्थिति की चरम बिंदु थी जिसकी जड़ें मध्यकालीन अतीत में गहरी जमी हुई थीं।

पृष्ठभूमि

ग्यारहवीं सदी के मध्य तक ईसाई चर्च प्रभावी रूप से एकीकृत था। फिर भी पश्चिमी और मध्य यूरोप पोप के अधीन था जबकि बाइजैंटाइन चर्च पैट्रियार्क ऑफ कुस्तुनतुनिया के प्रभाव में उभरा। चर्च की आय और प्रधानता के प्रश्न को लेकर दोनों प्रमुखों के बीच जबरदस्त झगड़ा था। 1054 ई. में ईसाई चर्च का विभाजन हो गया। उस समय से पश्चिमी चर्च कैथोलिक चर्च (यानी सार्वभौम) कहलाया और बाइजैंटाइन साम्राज्य का सामान्य चर्च ऑर्थोडोक्स चर्च (अर्थात दक्षिण मार्गी) या कुछ भागों में ग्रीक ऑर्थोडोक्स चर्च के रूप में जाना जाने लगा।

कैथोलिक चर्च उन मजबूत बंधनों में से एक था जो अनेक सामंती इकाइयों को धार्मिक समरूपता प्रदान करते थे। राजनीतिक एकता की अनुपस्थिति में चर्च सामाजिक

संबंधों को स्थिरता प्रदान करने में सहायक था। पोप कैथोलिक चर्च का प्रधान होता था। उसके पास अकूत संपत्ति थी। पूरे यूरोप में चर्च संबंधी नियुक्तियां उसी के द्वारा की जाती थीं। वह रोम में रहता था और उसने विस्तृत पदसोपानी प्रतिष्ठान बना रखे थे। इसमें भव्य कर्मकांड, आलीशान गिरजाघर और विशाल संगठन शामिल थे जो शिक्षा और दान का नियंत्रण करते थे। उसकी अपनी अलग सेना थी। सुदूर राज्यों में उसने अपने राजदूत नियुक्त कर रखे थे। शासक और राजकुमारों के लिए पोप के आदेशों की अवज्ञा करना कठिन था। पोप उनके अंदरूनी मामलों, यहां तक कि उनके राजनीतिक और वित्तीय मामलों में हस्तक्षेप करते थे।

तेरहवीं सदी के दौरान अनेक शासक पोप इनोसेंट तृतीय के जागीरदार बनाए गए। पश्चिमी यूरोप में सभी कृषि क्षेत्र का करीब एक-तिहाई भाग कैथोलिक चर्च के नियंत्रण में था। इसके पास पशु, अनाज के भंडार और तहखाने थे। बिशप, मठाधीशों और चर्च के अन्य विभिन्न पदाधिकारियों और अन्य सामंतों के बीच शायद ही कोई फर्क था। एक अर्थ में कैथोलिक चर्च यूरोपीय सामंतवाद को एकता प्रदान करता था। पवित्र रोमन साम्राज्य की ताकत और पोप की संस्था ने धर्म को जनता के लिए बहुत बड़ा बोझ बना दिया था। मध्यकाल के अंत में आंतरिक संकट के कारण सामंती ढांचा कमजोर पड़ने लगा था और इसका चर्च व्यवस्था पर असर पड़ना स्वाभाविक था।

धर्मसुधार आंदोलन की शुरुआत

चौदहवीं और पंद्रहवीं शताब्दियों में कैथालिक चर्च को संस्थागत समस्याओं का सामना करना पड़ रहा था क्योंकि चर्च के अधिकारी आध्यात्मिक नेतृत्व प्रदान करने में असमर्थ हो रहे थे। यह ऐसे समय में हो रहा था जब लोगों की धार्मिक संवेदना काफी बढ़ गई थी, जब युद्ध, महामारी, बीमारियों और फसलों के खराब होने के कारण ऐसी अराजक स्थिति पैदा हो गई थी कि लोग इन सबका कारण ईश्वर का क्रोध मानते थे। समयुगीन लेखनों से यह बिना किसी संदेह के स्पष्ट हो जाता है कि चर्च में भष्टाचार और अक्षमता बढ़ रही थी। चर्च के नेता आम लोगों की व्यक्तिगत धर्मपरायणता की कामना को संतुष्ट नहीं कर पा रहे थे।

आर्थिक परिवर्तनों और सामंती संकट के परिणामस्वरूप पोप के दरबार पहले से ही वित्तीय और राजनीतिक मामलों में उलझने लगे थे। चर्च के बढ़ते खर्चों का पूरा वित्तीय बोझ आम तौर पर जनसाधारण पर ही आता था। रोमन कैथोलिक चर्च शादी, बपतिस्मा, स्वीकारोक्ति और दफ़न सहित विभिन्न सेवाओं के लिए अपने सदस्यों से शुल्क वसूलता था। पादरी के खिलाफ अपील करने के लिए रोम जाना पड़ता था और इसमें बहुत अधिक खर्च होता था। कैथोलिक चर्च प्रतिष्ठान का वित्तीय बोझ पोप-सत्ता की बढ़ती आलोचना

का एक महत्वपूर्ण कारण था। इसके राजनीतिक घालमेल से अनिवार्य रूप से वित्तीय मांगें बढ़ती थीं। यह बढ़ती मांगों को पूरा करने के लिए धन इकट्ठा करने की शैली थी जिसके कारण चर्च के खिलाफ कड़वाहट और शत्रुता बढ़ गई। इसने धर्मसुधार आंदोलन की तत्काल पृष्ठभूमि का काम किया।

चर्च प्रतिष्ठान ने अपनी विस्तृत नौकरशाही और वित्तीय तंत्र का विकास कर लिया था। तुर्कों के खिलाफ धर्मयुद्ध चलाने और इतालवी युद्ध लड़ने के लिए बहुत अधिक धन की आवश्यकता थी। (पोप अलेक्जेंडर [1492-1503], जुलियस द्वितीय [1503-1513], लियो [1513-1521]—सभी इतालवी युद्ध में शामिल थे। इन सबका फ्रांस और स्पेन के साथ राजनीतिक गठबंधन था।) उन्हें पुनर्जागरण के दौरान निर्मित आलीशान भवनों और गिरजाघरों, विशाल नौकरशाही और सेना को बनाए रखने और चर्च के अधिकारियों के जीवन में व्याप्त विलासिता के व्यय का वहन करने के लिए भी धन की आवश्यकता थी। राजस्व उगाही के पारंपरिक तरीकों को और भी गहन बना दिया गया। चर्च प्रतिष्ठान जनसाधारण से टाइद (आय का लगभग दसवां हिस्सा) वसूलता था। लोगों को भी चर्च को शादी-विवाह महोत्सवों, बच्चों के बपतिस्मा और अप्रामाणिक शादियों को संपन्न कराने के लिए और कई अन्य प्रकार के बकायों का भुगतान करना पड़ता था। पोप दूर-दराज के चर्च अधिकारियों से कई प्रकार के अंशदान लेते थे जैसे दसवां हिस्सा, वार्षिक पहले फल का हिस्सा, पीटर्स पेंस आदि। इन तरीकों में सबसे विवादास्पद दंडमोचन सेवाओं की बिक्री थी, जिसकी चर्चा हम बाद में करेंगे। पोप के राजस्व में ह्रास का रुख था और धन एकत्र करने के नए तरीके खास तौर पर उदीयमान सामाजिक वर्गों में बहुत ही अलोकप्रिय हो गए थे। पोप के सुदूर राज्यों के प्रतिनिधि (कार्डिनल) भी अपने-अपने देशों में सर्वाधिक राजनीतिक शक्ति का लाभ उठा रहे थे जैसे इंगलैंड में कार्डिनल वोल्से, स्पेन में कार्डिनल जाइमेंस आदि। चर्च के अधिकारी अपना राजस्व बढ़ाने के लिए चर्च के अधिकाधिक पद अपने पास रखना चाहते थे। बहुलवाद की इस रिवायत (चर्च के अनेक पद एक साथ संभालने की प्रथा) के फलस्वरूप दरअसल अनुपस्थितिवाद की समस्या उठ खड़ी हुई। जैसा कि एक व्यक्ति अनेक पदों के कार्यों का निष्पादन नहीं कर सकता था, इसलिए चर्च के पदाधिकारी अपने धार्मिक कार्यों की अनदेखी करने लगे। उन्होंने अपना कार्य अयोग्य व्यक्तियों को सौंपना शुरू कर दिया जिन्हें अपने कर्तव्यों का ज्ञान नहीं था या कर्तव्यपालन में उनकी रुचि नहीं रही थी। स्वाभाविक है कि चर्च के प्रशासन का स्तर गिरने लगा।

चर्च की आर्थिक समस्याओं के परिणामस्वरूप बड़े और छोटे पादरियों के बीच अलगाव बढ़ने लगा। एक ओर बड़े धर्माधिकारी जैसे आर्कबिशप, बिशप और मठाधीश (एबॉट्स) चर्च के ऊंचे पदों के लिए स्पर्द्धा कर रहे थे और विशाल धन-संपत्ति संचित कर लेते थे, वहीं छोटे पादरी (पैरिश पादरी) गरीब रह जाते थे। वे सामान्य सामाजिक वर्ग से होते थे। चर्च के बड़े पदाधिकारी कुलीन वर्ग या बुर्जुआ परिवारों से चुने जाते थे। नीचे के

स्तर के पादरियों के लिए पदोन्नति के रास्ते बंद रहते थे इसलिए उनमें सामाजिक असंतोष बढ़ा। बहुलवाद (एक से अधिक पद पर बहाल होना) और अनुपस्थितिवाद (एक से अधिक पद धारण करने के फलस्वरूप एक स्थान पर उपस्थिति और अन्य स्थानों पर अनुपस्थिति) के परिणामस्वरूप नीच के स्तर पर पादरी समुदाय के चरित्र में गिरावट आई। वह सही धार्मिक और नैतिक दिशा बताने में असमर्थ थे। चर्च के पदाधिकारियों के अलग-अलग विचारों, उनके लाभ और भुक्खड़पन, अज्ञानता और पादरियों और चर्च अधिकारियों के खराब स्तर के विरुद्ध सामाजिक असंतोष बढ़ रहा था। सुधारों की मांग उन महिलाओं की बढ़ती संख्या से भी उठ रही थी जिन्होंने अपना जीवन ईश्वर को समर्पित कर दिया था। यद्यपि उन्हें न तो पादरियों के रूप में अभिषिक्त किया जा सकता था न ही सेकुलर पादरी वर्ग में सदस्यों के रूप में शामिल किया जा सकता था, फिर भी ये संन्यासिन महिलाएं या दिव्य माताएं, जैसा कि उन्हें कभी-कभी संबोधित किया जाता था, आध्यात्मिक सुधारों के द्वारा धर्म को शुद्ध करना चाहती थीं।

लोक धर्म का विकास

धर्मसुधार आंदोलन को एक अचानक हुई घटना मानने के बजाए विद्वान अब इसे मध्यकालीन संदर्भ में देखते हैं। धार्मिक संगठन में सुधारों की मांग का अभिप्राय अनिवार्य रूप से धर्म-विरोधी भावनाओं का उदय नहीं है। हाल के अध्ययनों (जैसे बर्न्ड मोइलर की *पाइटी इन जर्मनी अराउंड 1500*) से यह पता चलता है कि पोप के चर्च की असफलता ने उद्देश्यपूर्ण धर्म और निश्चित मोक्ष की लालसा के विचारों को जन्म दिया। धर्मसुधार आंदोलन की पूर्व संध्या पर जर्मनी और कुछ अन्य केंद्रों में लोक धर्म का सुस्पष्ट विकास हो गया था। धर्मसैद्धांतिक बहुलवाद के उदय के साथ-साथ सत्ता का संकट भी आरंभ हुआ।

लोक धर्म का अभिप्राय धर्मशास्त्रियों के अमूर्त विचारों को ऐसे किसी रूप में बदलना था जो सामाजिक आचरणों जैसे बपतिस्मा, शादी-विवाह, मृत्यु संबंधी कर्मकांडों आदि का रूप ले सके। 'लोक धर्मपरायणता' अभिव्यक्ति के उन रूपों और रीतियों को दरशाती थी जिनसे विशाल ईसाई समूह सहमत थे। यह धर्मपरायणता आशा और भविष्यवाणी, मुक्ति की आकांक्षा, मृत्यु के भय और शुद्धीकरण और शाश्वतता के पारंपरिक विचारों से जुड़ी रही।

पंद्रहवीं सदी में धर्मपरायणता का एक सामान्य रूप धार्मिक स्थलों की तीर्थयात्रा के जरिए और संतों के स्मृतिचिह्नों की पूजा के द्वारा उन्हें दान देकर मोक्ष का मार्ग प्राप्त करना था। यह माना जाता था कि इस प्रकार दान देकर शुद्धि की अवधि (मृत्यु के बाद की वह स्थिति जिसमें आत्मा स्वर्ग की तैयारी में शुद्ध होती है) काफी कम की जा सकती है।

धर्मपरायणता का एक अन्य रूप जन रहस्यवादी आंदोलन—*दि मॉडर्न डिवोशन* था।

यह आध्यात्मिकता की खोज में विकसित हुआ था। यह सामान्य जीवन के भाइयों और बहनों का आंदोलन था। इसकी स्थापना नीदरलैंड में जेरार्ड ग्रूट द्वारा की गई थी। यह *दि ब्रेदरेन ऑफ दि कॉमन लाइफ* कहलाता था। इस आंदोलन में सबसे महत्वपूर्ण नाम थामस ए केंपिस का है। माना जाता है कि उन्होंने रहस्यवादी क्लासिक—*दि इंस्टीट्यूशन ऑफ क्राइस्ट* की रचना की। इसमें ईशु तक पहुंचने का मार्ग रूढ़ियां और चिंतन नहीं बल्कि ईशु के नैतिक और नीतिसम्मत आचरण का सख्ती से अनुकरण करना बताया गया। ईश्वर का निर्णय शब्दों द्वारा नहीं बल्कि कर्मों द्वारा निर्धारित होता है। बाइबिल को ईसाई जीवन का सच्चा मार्गदर्शक माना जाता था। यद्यपि चर्च की रिवायतों और सिद्धांतों के खिलाफ कुछ भी नहीं कहा गया था फिर भी लोक रहस्यवाद ने इस आंदोलन की ओर आकर्षित लोगों के जीवन में औपचारिक चर्च के महत्व को कम कर दिया। इसका नेतृत्व वेसेल गैंस्फोर्ट द्वारा किया गया। बाद में लूथर ने भी अपने कुछ विचारों और गैंस्फोर्ट के विचारों में समानता पाई, खास तौर पर ईसाइयत को ईश्वर के साथ आध्यात्मिक समागम के रूप में देखने के बारे में उनके विचार।

एलिस्टर ई. मैक्ग्राथ के अनुसार धर्मसुधार आंदोलन के लगभग एक शताब्दी पहले ईसाई जगत में सत्ता का संकट उभर रहा था। रूढ़िवादी सिद्धांतों को लागू करने और उग्र विचारों को दबाने के लिए पोप को केंद्रीकरण और सैद्धांतिक बहसों पर स्पष्टीकरण देने की आवश्यकता थी। केंद्रीय चर्च के लिए ईसाई रूढ़ि परंपरा को परिभाषित करना और मध्यकाल के अंतिम समय के चर्च में दो प्रवृत्तियों के उभरने के कारण इसे लागू करना कठिन था। पहली प्रवृत्ति विच्छेद या फूट (1378 से 1417 के बीच *ग्रेट सिज्म*) थी जिसके परिणामस्वरूप पश्चिमी चर्च का विभाजन हुआ। पोप ग्रेगरी एकादश की मृत्यु के बाद पोप के पद के तीन परस्पर विरोधी दावेदार पैदा हो गए—ग्रेगरी बारहवां, बेनेडिक्ट तेरहवां और जॉन तेइसवां, इस स्थिति में झगड़े को निपटाने का अधिकार एक परिषद को सौंपा गया। काउंसिल ऑफ कांस्टैंस (1414-17 ई.) ने पोप के पद के लिए अपने उम्मीदवार मार्टिन पंचम को चुना और उसे धर्मसुधार करने के लिए सलाह दी। धार्मिक सत्ता के दो विरोधी सिद्धांत विकसित हुए—वे जो मानते थे कि धर्मसिद्धांत विषयक विवादों को निपटाने का अधिकार केवल सामान्य परिषद (यह सुलहकारी पद था) के पास था और वे जो मानते थे कि यह अधिकार पोप के पास था। दूसरी ओर, चर्च सुधारों की मांग ने सत्ता के संकट को गहरा कर दिया। परिषदीय (काउंसिलियर) आंदोलन ने पीसा के परिषदों (1409), कांस्टैंस (1414-17) और बास्ले (1431-39) के जरिए पोपतंत्र को अधिकार सौंपने के लिए मनाने का प्रयास किया। यह आम लोगों, मठ तंत्रों और सामान्य परिषदों के प्रयासों के माध्यम से चर्च के भीतर परिवर्तन लाने का प्रयास था।

चौदहवीं सदी में इंगलैंड में जॉन वायक्लिफ (1320-1384) और बोहेमिया में जान हस (1374-1415) द्वारा सुधार के व्यक्तिगत प्रयास किए गए। उनके अनुयायी क्रमशः लौलाड्र्स और हसाइट्स कहलाए। वायक्लिफ ने आस्था की भूमिका पर बल दिया। वह मानते थे कि आस्था ईश्वर का सबको मुफ्त उपहार है। यह चर्च के कर्मकांडों या इसके परम संस्कार के अनुसरण पर निर्भर नहीं करता है। आरंभ में इंगलैंड के कुलीन वर्ग ने (जो चर्च के आर्थिक विचारों का समर्थन करता था) उनके विचारों का समर्थन किया। फिर भी 1381 के विद्रोह में ग्रामीणों द्वारा दिए गए समर्थन का उनके विचारों पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ा। लौलाड्र्स इंगलैंड के जनसामान्य का समर्थन प्राप्त करने में असफल रहे और ये केवल ऑक्सफोर्ड विश्वविद्यालय के छोटे-से अकादमिक जगत में सीमित रहे जहां वायक्लिफ ने 1360 और 70 के दशकों में पढ़ाया था। बोहेमिया में हसाइट आंदोलन अपेक्षाकृत अधिक जटिल था। हस विश्वविद्यालय के धर्मशास्त्री थे जिन्होंने पोप की प्रधानता को अस्वीकार कर दिया। उन्होंने चर्च की संकल्पना ईसा मसीह के कानून का सही-सही अनुपालन करने वाले समुदाय के विशेष रूप में की। यह एक यूटोपियन धार्मिक समाज बनाने का प्रयास था। पोप द्वारा उन्हें ईश्वर निंदक घोषित किया गया और 1415 में खूंटे से बांधकर जला दिया गया। ये सब शक्तिशाली पोप के खिलाफ स्थानीय विरोध आंदोलन थे जो ईसाई जगत के धर्मसैद्धांतिक और आध्यात्मिक शासक के रूप में उसे चुनौती दे रहे थे। बहरहाल वायक्लिफ और हस का बाहरी दुनिया पर अकादमिक प्रभाव बहुत थोड़ा और कमजोर रहा। बोहेमियाई कुलीन वर्ग ने इस आमूलपरिवर्तनकारी आंदोलन के संरक्षक के रूप में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। यह विशेषता बाद में शुद्धतावादी युग के कुलीन सामंतों में देखी गई। रोमन कैथोलिक चर्च के बाहर भी एल्बीजेंसेस और वाल्डेंसेस जैसे अलग संगठनों का निर्माण करके धर्मसुधार करने के इसी प्रकार के प्रयास विफल हो गए थे और इन्हें पोपतंत्र के अधिकारियों द्वारा दबा दिया गया था। फिर भी सुधार के लिए किए गए ये प्रयास सोलहवीं सदी के धर्मसुधार आंदोलन की पृष्ठभूमि का निर्माण करते हैं। उपर्युक्त घटनाओं से स्पष्ट है कि आरंभ में कुछ उम्मीद थी कि चर्च का भीतर से सुधार किया जा सकता है और जब इस तरह की उम्मीदें चर्च अधिकारियों के हठी रवैए से टकराईं तो धर्मनिरपेक्ष प्राधिकारियों से अपील के जरिए सुधार लाने के पुनः प्रयास किए गए। बोहेमिया सत्रहवीं सदी में भी आम लोगों और चर्च के अधिकारियों के बीच धार्मिक युद्ध स्थल बना रहा।

विद्वानों द्वारा एक प्रश्न जो अकसर उठाया जाता है वह यह है कि पहले के ये प्रयास विफल क्यों हो गए जबकि सोलहवीं सदी में धार्मिक सुधारों के प्रयास सफल रहे। इसकी अनेक व्याख्याएं हैं।

पहली, सामंती संकट के बाद निरंकुश राजतंत्रों के अधीन यूरोप के अनेक भागों में शक्तिशाली केंद्रीकृत राज्य उभरने लगे। मध्यकाल में कुछ अहम मुद्दों पर चर्च और राज्यों के बीच विवाद उत्पन्न हुआ था। पोप के न्यायिक क्षेत्राधिकार के दावे और शासकों की राजनीतिक संप्रभुता का दावा विवाद की जड़ थी। राष्ट्र की सीमाओं से परे चर्च के अपने

विधिक और वित्तीय संगठन होने के कारण यह केंद्रीयकृत प्रशासन हासिल करने के शाही प्रयासों के मार्ग में बहुत बड़ी बाधा था। राजाओं और राजकुमारों की इच्छा अपने राज्यों पर संपूर्ण स्वामित्व, अपनी प्रजा और अपने क्षेत्रों पर नियंत्रण बनाए रखने की थी। अधिकाधिक नियंत्रण का मतलब अधिक से अधिक राजस्व था। इंगलैंड के हेनरी अष्टम ने जनसमर्थन से प्राप्त राष्ट्रवाद के आधार पर रोमन चर्च से अपना संबंध पूरी तरह तोड़ लिया था। इस बात के पर्याप्त प्रमाण हैं कि जर्मनी में जबरदस्त रोम-विरोधी भावना थी, जिससे लूथर के धर्मसुधार आंदोलन को समर्थन मिला। प्रोटेस्टेंट धर्मसुधारकों ने अपने विचारों के प्रसार के लिए नागरिक या राज्य प्राधिकारियों के साथ गठबंधन कर लिया। मार्टिन लूथर ने जर्मन कुलीन का समर्थन मांगा जबकि स्विटजरलैंड में ज्विंगली ने अपने सुधार कार्यक्रम को कार्यान्वित करने के लिए ज्यूरिक के नगर परिषदों से अपील की। इस प्रकार हम देखते हैं कि यूरोपीय धर्मसुधार अधिकांशतया सुधारकों और नगर प्राधिकारियों के बीच गठबंधन द्वारा ही आगे बढ़ सका। राष्ट्रीय अयाजक शासकों द्वारा अंतरराष्ट्रीय चर्च से अपनी आजादी पाने के लिए धर्मसुधार को अकसर आंदोलन का रूप दे दिया जाता था। साथ ही हमें यह बात अवश्य याद रखनी चाहिए कि सार्वभौम चर्च और ईसाई जगत का संस्थागत विघटन केवल उन क्षेत्रों तक सीमित नहीं था जिन क्षेत्रों ने प्रोटेस्टेंटवाद को चुना। पुराने अंतरराष्ट्रीय चर्च ने चर्च संबंधी नियुक्तियों पर पोप की पकड़ ढीली होते और 1517 से काफी पहले अयाजक प्राधिकारियों और स्थानीय राजकुमारों द्वारा रोमन धार्मिक दरबारों और धर्मविधानों (विधान जो आस्था, नैतिकता और चर्च के संघटन को शासित करते हैं) की सार्वभौमिकता का विरोध होते देखा।

दूसरे, सोलहवीं सदी में धर्मसुधार आंदोलन इसलिए भी प्रभावी हुआ क्योंकि प्रिंटिंग प्रेस के रूप में प्रौद्योगिकीय अभिनव परिवर्तन हुआ था। यद्यपि चीनियों ने लकड़ी के तख्ते से मुद्रण की कला पहले ही विकसित कर ली थी लेकिन आधुनिक मुद्रण के साथ जर्मनी के मेंज के जॉन गुटेनबर्ग का नाम जुड़ा हुआ है। हालांकि धर्मसुधार आंदोलन पूरी तरह प्रिंटिंग प्रेस पर निर्भर नहीं था, फिर भी इसने बौद्धिक वातावरण में परिवर्तन के एक कारक के रूप में योगदान दिया। प्रिंटिंग प्रेस ने हाथ से पांडुलिपियों की प्रतिलिपि तैयार करने की श्रमसाध्य प्रक्रिया का स्थान ले लिया। मूल प्रतियों की कई प्रतियां बनाने की प्रक्रिया और यूरोप के विभिन्न भागों में इसकी उपलब्धता प्रदान करने में इसने बहुत योगदान दिया। मुद्रित पुस्तकों के जरिए धार्मिक सुधारकों के विचारों का आसानी से प्रसार किया जा सकता था। जैसा कि मैक्ग्राथ कहते हैं, प्रोटेस्टेंटवाद का ऑक्सफोर्ड की तुलना में कैंब्रिज में अधिक प्रभाव आंशिक तौर पर महाद्वीपीय यूरोपीय बंदरगाहों से कैंब्रिज की निकटता को दरशाता है जहां से प्रोटेस्टेंट की किताबें प्राप्त की जा सकती थीं। सोलहवीं सदी के तीसरे दशक तक इंगलैंड के उच्च वर्गों में लूथर की किताबें अधिक लोकप्रिय होने लगी थीं क्योंकि इन वर्गों के पास मुद्रित पुस्तकों को खरीदने के लिए धन और पढ़ने की क्षमता थी। धर्मसुधार आंदोलन का

मुख्य जोर मौलिक स्रोतों—बाइबिल और ईसाई धर्मशास्त्रियों की बहुत पुरानी पुस्तकों पर था। ये आम तौर पर 'पैट्रिस्टिक लेखक' कहलाते थे। प्रिंटिंग प्रेस के आगमन से इन पुस्तकों के अपेक्षाकृत अधिक सही संस्करणों को तैयार करने में मदद मिली। मानववादियों ने इस प्रक्रिया में बहुत बड़ा योगदान दिया। अगस्टाइन (एक पांडित्यपूर्ण लेखक) के लेखनों, न्यू टेस्टामेंट के प्रकाशन और इरेस्मस द्वारा 1516 में प्रथम प्रकाशित ग्रीक न्यू टेस्टामेंट के आने से ये स्रोत व्यापक रूप में उपलब्ध हो गए और यूरोप के विभिन्न भागों में धर्मसुधार के विचारों का प्रसार संभव हो सका। जहां प्रिंटिंग प्रेस नहीं होने के कारण वाइक्लिफ के विचारों को बाहर के क्षेत्रों में शायद ही जाना जाता था वहीं प्रिंटिंग प्रेस के इस्तेमाल के कारण लूथर के विचारों का जर्मनी से परे अन्य क्षेत्रों में काफी तेजी से प्रचार हुआ। धर्मसुधार आंदोलन से पठन सामग्री में काफी बड़े पैमाने पर वृद्धि हुई और पुस्तकों का बाजार बढ़ा। केवल विटेनबर्ग में ही सात दुकानें खुल गईं जो लूथर और उनके सहयोगियों के लेखनों का मुद्रण करती थीं (कार्टर लिंडबर्ग, 1996, पृ. 37)। 1546 में लूथर की मृत्यु के समय बाइबिल की लगभग 10 लाख प्रतियां मुद्रित की गई थीं। धर्मसुधार प्रचार में पुस्तिकाएं, शोध, अनुवाद, तसवीरें और कार्टून्स शामिल थे।

धर्मसुधार आंदोलन को प्रभावी बनाने वाले अन्य कई कारकों में तीसरा महत्वपूर्ण कारक पुनर्जागरण मानववाद का उदय था। मानववाद शब्द को आम तौर पर धर्मविरोधी या धर्म के साथ भिड़ंत का रवैया रखने वाले दर्शन के रूप में प्रस्तुत किया जाता है। लेकिन इसके विपरीत कई मानववादी उल्लेखनीय रूप से धार्मिक थे और ईसाई चर्च को समाप्त करने के बजाए इसके मूल रूप पर फोकस करके धर्म को मजबूत करने में विश्वास करते थे। मानववाद के हाल के अध्ययनों से पता चलता है कि यह एक विषमांग आंदोलन था और इसके स्वरूप और विचारधारा का किसी प्रकार सामान्यीकरण इसकी विशेषताओं को कम करता है। इस आंदोलन का एक महत्वपूर्ण पहलू इसकी विविधता थी। यद्यपि एक आंदोलन के रूप में मानववाद धर्म या चर्च संगठन के साथ प्रत्यक्ष रूप से नहीं जुड़ा था, फिर भी इसने आलोचना के उपकरण उपलब्ध कराए और उन मुद्दों को उठाया जो कभी-कभी उन दिनों प्रचलित और प्रचारित धर्म से जुड़े थे। मानववादी अपने से पहले समय को पतनकाल के रूप में देखते थे और सामाजिक मिथक से उबरने के लिए उन्होंने मूल धर्मग्रंथों और बाइबिल की खोज शुरू की। कहा जा सकता है कि पुनर्जागरण मानववाद के सहयोग के बिना पोपतंत्र के वर्चस्व को चुनौती देने की कल्पना नहीं की जा सकती थी, जिसकी पराकाष्ठा प्रोटेस्टेंट धर्मसुधार आंदोलन के रूप में देखने को मिली।

यह बात भी ध्यान देने योग्य है कि जिस 'मानववाद' ने धर्मसुधार आंदोलन के उदय को प्रभावित किया वह इतालवी मानववाद नहीं बल्कि उत्तरी मानववाद था। इटली में मानववाद अधिकांशतया नगर अधिकारियों या पोप के दरबार में पल्लवित हुआ लेकिन उत्तरी यूरोप में इसे आम तौर पर चर्च द्वारा संरक्षण दिया गया था। इसलिए कभी-कभी इसे

'ईसाई मानववाद' भी कहा जाता है। ईसाई मानववाद मूल पांडुलिपियों की खोज के द्वारा मनुष्य के पुनर्अन्वेषण और चरम परिपूर्णता प्राप्त करने का प्रयास था। ये मानववादी मानते थे कि बाइबिल के अध्ययन के लिए पुराशास्त्रीय ज्ञान के अनुप्रयोग से आस्था और बुद्धि में बेहतर समन्वय स्थापित हो सकता है। उत्तरी यूरोप के कुछ भागों में बाइबिल संबंधी शोध के साथ-साथ वितंडावाद की कटु आलोचना की जा रही थी। वितंडावाद मध्यकाल के अंतिम वर्षों में होने वाला अकादमिक आंदोलन था जिसमें ईसाई धर्मविज्ञान का विकास अरस्तु, थामस एक्विनस और डंस स्कोटस के दर्शन के आधार पर किया गया था। इसने तर्क के आधार पर ईसाई धर्मविज्ञान की अंतर्निष्ठ विवेकशीलता को स्थापित करने की कोशिश की परंतु इसने धर्म को आम लोगों के लिए बहुत अस्पष्ट और जटिल बना दिया। पंद्रहवीं सदी के अंत में मानववाद और वितंडावाद के बीच टकराव से धर्मसुधार आंदोलन के विकास के नए आधार तैयार हुए। वियेना विश्वविद्यालय में भी ऐसा ही हुआ। इससे स्विस धर्मसुधार आंदोलन को बल मिला। जर्मनी का एरफर्ट विश्वविद्यालय एक अन्य केंद्र था जहां पांडित्यपूर्ण धर्मशास्त्र की प्रतिक्रिया में मार्टिन लूथर के धार्मिक विचारों का निर्माण हुआ। मानववादी विद्वानों द्वारा मूल पाठों के आलोचनात्मक विश्लेषण ने आगस्टाइन लेखनों सहित पूर्वाचार्य लेखकों (पैट्रिस्टिक राइटर्स) के अनेक गलत उद्धरणों को दूर किया और उन्हें संगत संदर्भ में प्रस्तुत किया।

किसी भी मानववादी लेखक का धर्मसुधार आंदोलन के नेताओं पर उतना शक्तिशाली प्रभाव नहीं था जितना रोटेंडम के इरेस्मस का था। उनके लेखनों को उत्तरी मानववाद का सर्वश्रेष्ठ उदाहरण माना जाता है। डेसिडेरियस इरेस्मस (1466-1536) ने ईसाइयत को आम लोगों के लिए अर्थपूर्ण बनाने की कोशिश की। उनका प्रभाव पूरी सोलहवीं सदी के दौरान रहा। उनके विचारों का वर्णन कभी-कभी 'इरेस्मियन रिफॉर्मेशन' के रूप में किया जाता है। वह इरेस्मस ही थे जिसने धर्मग्रंथों की भूमिका पर बल दिया, जिन्हें धर्मशास्त्रियों के एकाधिकारपूर्ण नियंत्रण से अलग किया जाना आवश्यक था। उनके अनुसार व्यावहारिक धर्मपरायणता अपनी भावना का विषय है न कि औपचारिक अनुशीलन की। वह संतों की पूजा या तीर्थाटन के प्रति आसक्ति जैसी अनावश्यक धार्मिक रिवायतों को हतोत्साहित करते थे। वह मानववादी शिक्षा पर बल देते थे। उनका मानना था कि एक शिक्षित राजकुमार के अधीन और ईसा मसीह के सच्चे मार्ग पर चलकर ही एक न्यायपूर्ण समाज का निर्माण होगा। उनकी पुस्तक *इनक्रिडियोन मिलिटस क्रिस्टियनस* (ईसाई सिपाही की हैंडबुक), जो उस समय की सबसे प्रभावशाली मानववादी रचना थी, सर्वप्रथम 1503 में प्रकाशित हुई। 1515 के बाद यूरोप में इसे व्यापक प्रसिद्धि मिली जब इसका तीसरा संस्करण प्रकाशित हुआ। वह चाहते थे कि लोक धर्मपरायणता मूल धर्मग्रंथ पर आधारित हो और ईसा मसीह का दर्शन नैतिकता का रूप प्रदान करे। न्यू टेस्टामेंट (नव विधान) को ईसा मसीह का कानून माना जाए और सभी ईसाई इसका अनुपालन करें। अंदरूनी धर्म पर

उनके प्रतीकात्मक मानववादी जोर ने बाद में अनेक धर्म सुधारकों के विचारों को जगाया। वह मानते थे कि किसी पादरी के सामने अपने पाप को स्वीकार करने की आवश्यकता नहीं जब सीधे ईश्वर के सामने इसे स्वीकार किया जा सकता है। वह यह भी नहीं मानते थे कि धार्मिक जीवन ईसाई जीवन का सर्वोत्तम रूप है। इरेस्मस का पूर्ण विश्वास था कि ईसाइयत का भविष्य सामान्य लोगों पर निर्भर है न कि पादरी वर्ग पर।

स्विटजरलैंड में धर्मसुधार आंदोलन पर मानववाद का प्रभाव बिलकुल स्पष्ट था जब ज्यूरिक शहर में ज्विंगली ने सुधार कार्यक्रम आरंभ किया जो व्यापक स्तर पर कारपोरेट चर्च और धर्मग्रंथ की गोपनीयता के मानववादी विचारों पर आधारित था। यहां मानववाद ने इरेस्मस के विचारों पर आधारित बौद्धिक आधार प्रदान किया।

जर्मनी में भी मानववाद एक सशक्त आंदोलन था। यह वितंडावाद को सीधे चुनौती देता था। जर्मन राज्यों के विश्वविद्यालय इन दोनों समूहों के बीच युद्धस्थल बन गए थे। जर्मन विश्वविद्यालयों ने मानववाद के उदय में बहुत बड़ी भूमिका अदा की। कुछ संरक्षक राजकुमारों ने भी मानववादियों द्वारा प्रसारित नई शिक्षा पर ध्यान केंद्रित किया। जैसा कि ए.जी. डिकेंस कहते हैं, जर्मन मानववाद का एक आंदोलन के रूप में वर्णन करना कठिन है क्योंकि जर्मनी के मानववादियों में प्राचीन जगत के लिए सामान्य प्रेम के अलावा अनेक प्रकार के दृढ़ विश्वास थे। मुख्य मानववादियों जैसे रूडोल्फ एग्रिकोला, ब्रैंट विंपफेलिंग, म्यूशियन, सेल्टिस, हटन और कई अन्य मानववादियों के अपने-अपने विचार और कार्यक्रम थे। उनमें से अधिकांश में प्रायः पोपतंत्र विरोधी प्रवृत्तियां देखी जाती थीं। वे पोपतंत्र की बुराइयों के कट्टर आलोचक थे। उनमें सशक्त राष्ट्रीय भावनाएं थीं। वे लोक अनुश्रुतियों का प्रचार करते थे। देसी साहित्य के विकास में उनका बहुत बड़ा योगदान था। 'लूथर के धर्मसुधार आंदोलन में उन्होंने दाई का काम किया' (ए.जी. डिकेंस)। पोपतंत्र विरोधी भावनाएं दरशाने वाले लोकगीत जैसे कि 'ब्लाइंड लीडिंग द ब्लाइंड' (अंधे का नेतृत्व अंधों के हाथों) और *ऑफ दि राइज एंड फॉल ऑफ एंटीक्राइस्ट* आदि जैसे नाटकों की लोकप्रियता से पता चलता है कि धार्मिक सुधारों का माहौल बन रहा था। सेबास्टियन के *ब्रैंट्स शिप ऑफ फूल्स* जैसे व्यंग्य कई मानववादियों के बीच संपूर्ण सुधार की आकांक्षा दरशाते हैं। लूथर के सहकर्मी मेलांकथन ने मानव बुद्धि को ईसा मसीह की शिक्षा के साथ और सुधारकों की धार्मिक दृढ़शक्ति को मानववाद के साथ जोड़ने का प्रयास किया।

सहस्राब्दवाद

चर्च के अधिकारियों के प्रति घृणा भावना कभी-कभी विधर्मी जनआंदोलनों का रूप ले लेती थी। इसका कारण चर्च अधिकारी द्वारा स्वीकृत वह सिद्धांत था जिसमें माना गया गया था कि निकट भविष्य में किसी भी समय दुनिया का अंत हो जाएगा और ईसा मसीह प्रत्येक

व्यक्ति के बारे में निर्णय करने के लिए पुनः आएंगे। जो लोग ईसा द्वारा चुने जाएंगे वे संत कहलाएंगे और वे स्वर्ग में उनके साथ राज करेंगे। सामाजिक और आर्थिक असमानताओं के परिणामस्वरूप मध्यकालीन सुधारकों, खास तौर पर समाज के निर्धन वर्ग के सुधारकों ने 'लास्ट जजमेंट' (अंतिम निर्णय) के इस सिद्धांत की व्याख्या इस अर्थ में की कि ईसा अमीरों को अभिशाप देंगे और गरीबों के लिए एक नए संसार का निर्माण करेंगे। उनका विश्वास था कि एक हजार वर्ष तक (सहस्राब्दि तक) गरीब ईसा के राज्य का शासन करेंगे। यह एक क्रांतिकारी व्याख्या थी। इसने इसके मानने वालों को स्थापित संस्थाओं और इसके भ्रष्टाचार पर हमला करने का औचित्य प्रदान किया। इसके आधार पर उन्होंने तर्क दिया कि मध्यकालीन चर्च पर ईसाविरोधी (एंटीक्राइस्ट) का शासन है। बाइबिल में इसका वर्णन 'व्हेयर ऑफ बेबिलोन' (बेबिलोन नामक स्थान) के रूप में है। जब लूथर के नेतृत्व में सोलहवीं सदी के सुधारकों ने पोप को ईसाविरोधी (एंटीक्राइस्ट) कहा तो वे दरअसल चर्च पर सुव्यवस्थित हमले और विरोध की पुरानी परंपरा को ही आगे बढ़ा रहे थे। चॉसर ने भी *दि कैंटरबरी टेल्स* में चर्च अधिकारियों में व्याप्त भ्रष्टाचार को उजागर किया है। इसमें दो पादरियों को घृणा और क्षोभ का पात्र बनाया गया है क्योंकि वे पापमुक्तियां बेचते थे और बहुत भ्रष्ट थे।

इतिहासकारों, समाजशास्त्रियों और मानवविज्ञानियों के हाल के अध्ययनों से पता चलता है कि सहस्राब्दवाद एक व्यापक परा-सांस्कृतिक परिघटना थी जिसमें धर्म का तत्व शामिल था। यह कुछ हद तक आरंभिक आधुनिक क्रांतियों के लिए भी उत्तरदायी था। इसे मोक्ष के एक प्रारूप के रूप में देखा जा सकता है जो संपूर्ण समुदाय की सामूहिक मानसिकता का प्रतिनिधित्व करता है जिसका उद्देश्य भौतिक जीवन को पाप और बुराई से मुक्त करके संपूर्ण आस्था में बदलना था।

धर्मसुधार आंदोलन का सामाजिक संदर्भ

विद्वानों ने धार्मिक उथल-पुथल की धर्मसुधार आंदोलन के रूप में भिन्न-भिन्न प्रकार से व्याख्या की है जिसने एक चर्च के अधीन समाज के बाहरी ढांचे को नष्ट कर दिया। जैसा कि लॉरेंस स्टोन कहते हैं, इस संकट को दो दृष्टिकोणों से देखा जा सकता है। पहला दृष्टिकोण धार्मिक भावनाओं और आस्था पर बल देता है जो आंदोलन की जनवादी अंतर्धारा में देखा जा सकता है। धर्मसुधार आंदोलन को उन नेताओं और संस्थाओं की प्रतिक्रियाओं की शृंखला के रूप में देखा जाता है जिन्हें लोगों के दबावों और मांगों का सामना करना पड़ता था। यह दृष्टिकोण दरअसल उन विचारधारात्मक तनावों और टकरावों पर बल देता है जो मध्यकाल के अंत में यूरोप में चल रहे थे। इनका धर्मसुधार के प्रयासों की प्रवृत्तियों पर प्रभाव पड़ रहा था। दूसरा दृष्टिकोण विख्यात शख्सियतों और उनके द्वारा

लोगों को अपने विचारों से प्रभावित करने के लिए राज्य की शक्ति के प्रयोग पर बहुत अधिक बल देता है। यह दृढ़प्रतिज्ञ अल्पसंख्यक समुदाय ईसाइयत संबंधी अपने विचार आज्ञा-परायण और कभी-कभी अनिच्छुक बहुसंख्यकों पर नीदरलैंड्स में केल्विनिस्ट शासन और इंगलैंड में एंग्लिकन सुधारों जैसी शक्तियों के प्रयोग द्वारा थोपता था।

जहां तक धर्मसुधार आंदोलन की शुरुआत का संबंध है, एक व्याख्या (जो कि हेनरी हाऊजर के लेखन पर आधारित है) कहती है कि यह यूरोप के उन भागों में प्रभावी रूप में शुरू हुआ जो क्षेत्र जबरदस्त आर्थिक और सामाजिक विस्थापन के शिकार थे। जनसंख्या में वृद्धि से मूल्यों में वृद्धि हुई। ग्रामीण जोतों के विखंडन, बढ़ते हुए लगान और घटती हुई मजदूरियों के परिणामस्वरूप गांव के लोग शहरों में जाकर बसने लगे। नतीजतन बेरोजगारी और अमीर और गरीब के बीच का अंतराल बढ़ने लगा। स्थिर या घटती मजदूरी, बढ़ते मूल्यों और बढ़ते कर से किसान और दस्तकार खास तौर पर प्रभावित हुए। इसलिए यह कहा जाता है कि लूथर और केल्विन की सफलता जनसामान्य की गरीबी, आक्रोश और सामाजिक असंतोष के कारण हुई थी। बहरहाल इस विचार को बिना किसी शर्त के स्वीकार नहीं किया जा सकता है क्योंकि इस प्रकार के जनसंख्या दबाव के बहुत कम प्रमाण हैं जिससे इतने बड़े पैमाने पर सामाजिक विस्थापन हुआ हो कि लोग प्रत्यक्ष रूप से धर्मसुधार आंदोलन से जुड़ जाएं। यह व्याख्या सभी क्षेत्रों के लिए लागू नहीं होती क्योंकि जर्मनी, जहां धर्मसुधार आंदोलन आरंभ हुआ, काफी विकसित क्षेत्र था जबकि स्कॉटलैंड, जो कि धर्मसुधार आंदोलन का एक अन्य केंद्र था, बहुत पिछड़ा था।

मार्क्स और एंगेल्स के विचार एक अन्य विश्लेषण में शामिल हैं। इनके अनुसार धर्मसुधार आंदोलन बुर्जुआ वर्ग के उदय से जुड़ा था। ये धर्मसुधार आंदोलन को 'क्रांतिकारी' मानते हैं क्योंकि यह नए वर्ग की सामंती व्यवस्था को चुनौती का प्रतिनिधित्व करता था। साथ ही दीर्घ काल में प्राचीन चर्च के अपदस्थ होने से शिक्षित वर्गों के बीच विचार के क्रमिक धर्मनिरपेक्षीकरण का मार्ग खुल गया। धर्म को विशुद्ध रूप से निजी मामला माना जाने लगा। एंगेल्स ने कहा कि धर्मसुधार आंदोलन जर्मनी के आर्थिक विकास और अंतरराष्ट्रीय व्यापार में इसकी बढ़ती भागीदारी के कारण संभव हो सका। अपने लेख 'द ग्रेट पीजेंट वार' में फ्रेडरिक एंगेल्स ने लिखा कि धर्मसुधार आंदोलन के आरंभ और पीजेंट वार (किसान युद्ध) के अंत के बीच का समय जर्मनी में आरंभिक बुर्जुआ क्रांति का दौर था। 'पीजेंट वार' (किसान युद्ध) को सामाजिक-आर्थिक संघर्ष की अभिव्यक्ति माना जाता है। धर्मसुधार आंदोलन इसकी विचारधारात्मक अभिव्यक्ति है। मार्क्सवादियों के अनुसार सामाजिक पैगंबरों की क्रांतिकारी शब्दावली जनसामान्य को सूचीबद्ध करने की युक्ति थी। इससे सुधारकगण सामाजिक क्रांति के अनिच्छुक एजेंट्स बन गए। यह माना जाता है कि बढ़ती हुई वाणिज्यिक गतिविधि ने वणिक समुदाय की धन-संपत्ति और उनके आकार के विस्तार में योगदान दिया और लूथर, केल्विन और ज्विंगली ने मुक्त नगरों के प्रभावशाली समूहों पर

सीधे प्रभाव डाला। इसके विपरीत यह कहा जा सकता है कि यद्यपि यूरोप में आर्थिक विकास और बुर्जुआ वर्ग के उदय का अनुभव होने लगा था, फिर भी यह प्रश्न उठाया जा सकता है कि क्या (क) बुर्जआ वर्ग की संपत्ति में वृद्धि उतनी ही तेज गति से हुई जितनी नव अभिजात्य वर्ग की संपत्ति में, जिसे लगान में वृद्धि और भूमि से प्राप्त आय से लाभ हुआ था अथवा राजकुमारों की आर्थिक शक्ति में वृद्धि के समान थी, जिन्होंने चर्च की संपत्ति पर कब्जा करके धन प्राप्त किया था और करों के नए स्रोतों से अपना राजस्व बढ़ाया था (अध्याय नौ देखें)। दरअसल धर्मसुधार आंदोलन के नेतागण राजकुमारों, कुलीन वर्ग और नगर परिषदों को अच्छे लगते थे; (ख) क्या प्रेस्बिटेरियन धर्म की भारी लोकप्रियता का बुर्जुआ से कोई लेना-देना था क्योंकि स्कॉटलैंड एक निर्धन देश था जहां प्रभावशाली बुर्जुआ वर्ग नहीं था।

हाल के दिनों में धर्मसुधार आंदोलन की समाजशास्त्रीय व्याख्या को महत्व मिला है। इस विचार के अनुसार आध्यात्मिक और प्रशासनिक कार्यों का निर्वाह करने में असफल रहने के कारण पादरी अपनी साख खो चुके थे और जनसामान्य से उभरे नव शिक्षित संभ्रांत लोग इन कार्यों को करने के लिए उत्सुक थे। यह धर्मसुधार आंदोलन के सभी स्तरों पर देखा जा सकता था। बदनाम पादरियों द्वारा मोक्ष दिलाने की भूमिका अपना आकर्षण खो रही थी। मानववादी आंदोलन द्वारा पादरी विरोधी भावनाएं काफी सुदृढ़ हुई वहीं न्यू टेस्टामेंट (नव विधान) ने पादरी सत्ता को नष्ट करने में मदद की। इस स्थिति का लाभ उठाकर कुछ क्षेत्रों में राजकुमारों और कुलीनों ने चर्च की संपत्ति और इसकी सत्ता पर कब्जा कर लिया। धर्मसुधार आंदोलन से जिन कुछ विशिष्ट समूहों को लाभ होने वाला था, उन समूहों के लिए इसका विशेष महत्व था। राजकुमारों के लिए यह राज्य निर्माण का एक आदर्श उपकरण था। कुलीनतंत्रवादियों को ज्विंगली और केल्विन के उपदेशों से नगर की जनसंख्या पर अपना नियंत्रण स्थापित करने में सहायता मिली। विकासशील मध्यम वर्ग को पुरानी धार्मिक रूढ़ियों से खुद को मुक्त करने का अवसर मिला वहीं निम्न वर्ग को यह विश्वास था कि पोपतंत्रीय चर्च के नाश होने से उन्हें कर के बोझ से मुक्ति मिलेगी। विकसित हो रही राष्ट्रवाद की भावनाओं (उदाहरण के लिए कुछ जर्मन राज्यों, ज्यूरिक, इंगलैंड आदि में) से भी धर्मसुधार आंदोलन के सफल होने में सहायता मिली।

अत: जैसा कि एलिस्टर मैक्ग्राथ कहते हैं कि धर्मसुधार आंदोलन सामाजिक और विचाराधारात्मक कारकों के एक जटिल असमान उद्गम-स्थल से उत्पन्न हुआ। राष्ट्रवाद के उदय, दक्षिणी जर्मन राज्यों और स्विस नगरों की बढ़ती राजनीतिक शक्ति, अलग-अलग हस्तियों के उदय, बौद्धिक आंदोलनों और चर्च की दुनिया में बढ़ते संकट के समय से विचारधारात्मक जागरूकता ने धर्मसुधार आंदोलन का मार्ग प्रशस्त किया। यह अलग-अलग क्षेत्रों में भिन्न-भिन्न स्वरूप धारण करता गया।

जर्मन धर्मसुधार आंदोलन

जर्मनी की राजनीति और सामाजिक-आर्थिक हालात प्रोटेस्टेंट धर्मसुधार आंदोलन के उदय और प्रसार के अनुकूल साबित हुए। यहां की अर्थव्यवस्था का खास तौर पर राइन और ऊपरी डेन्यूब क्षेत्र में कपड़ा, कागज और शीशा विनिर्माण के क्षेत्रों में तेजी से विकास हो रहा था। लोहा और तांबा के उत्पादन में लगातार वृद्धि दर्ज हो रही थी। कुछ परिवारों ने खनिज अयस्क और प्रगलन प्रक्रिया पर अपना नियंत्रण स्थापित कर लिया था। वे खानों के दोहन के लिए महंगे उपकरणों में निवेश करते थे और गरीबों को बड़ी संख्या में खान मजदूर के रूप में काम पर रखते थे। ऑग्सबर्ग और न्यूरेमबर्ग शहरों में कुछ धनी परिवार उभर आए थे। इनमें सबसे उल्लेखनीय तरक्की फ्यूगर परिवार ने की। यह परिवार मामूली बुनकर से उठकर यूरोप के बैंकर प्रिंस की हैसियत तक पहुंच गया। इसने अपनी गतिविधियां वाणिज्य, राजाओं, राजकुमारों और चर्च को उधार देने में फैला रखी थी और चांदी और तांबे के खानों पर एकाधिकार प्राप्त कर लिया था। वे अपने ऋणों पर उच्च ब्याज दर लेते थे। कुछ अन्य धनी बैंकर परिवार भी थे जैसे उल्म में इहिंगर और स्काड और ऑग्सबर्ग में हॉक्स्टेटर्स और वेल्सर। यद्यपि सोलहवीं सदी में अर्थव्यवस्था में काफी प्रभावशाली उन्नति देखी गई, लेकिन इसके लाभों का समुचित वितरण नहीं हुआ। मैक्स स्टिनमेज कहते हैं कि जर्मनी की आर्थिक स्थिति की विशेषता यह थी कि वाणिज्यिक उत्पादन औंधे मुंह उलट गया था और पंद्रहवीं सदी के मध्य तक पूंजीवादी तत्व प्रविष्ट कर गए थे। साथ ही गांवों में सामंतवाद शोषण का एक महत्वपूर्ण स्रोत बना रहा और पादरी वर्ग प्राय: जमींदारों की भूमिका अदा करता था जो किसानों में विद्रोह की भावना को भड़का रहा था। अत: समाज तनाव और उथल-पुथल के दौर से गुजर रहा था। दूसरी ओर जर्मनी में कैथोलिक चर्च के पास काफी अधिक जमीन थी। चर्च के नियंत्रण के अधीन राइन सबसे उर्वर क्षेत्र था। इसे प्राय: 'दि प्रीस्ट्स रोड' के रूप में उल्लेख किया जाता है। आर्कबिशप और कुछ बिशप करीब-करीब शासक बन चुके थे। आध्यात्मिक और नैतिक पतन मानववादी विद्वानों के ध्यान का केंद्र बन गया था। जर्मनी में पोपतंत्र-विरोध और पादरीवाद-विरोध धर्म के दो मुख्य लक्षण थे।

ए.जी. डिकेंस 1500 के बाद के वर्षों के दौरान जर्मन राष्ट्रवाद जगाने में मानववादियों और पैंफलेट लेखकों के प्रभाव पर जोर देते हैं। ये इटैलियन विरोधी और पोपतंत्र विरोधी भावनाएं दरशाते थे। मानववादियों ने चर्च के विरुद्ध पुराने अभियान को नए शस्त्र प्रदान किए। साम्राज्य और पोपतंत्र के बीच मानाभिषेक (इनवेस्टिचर) के मसले पर द्वंद्व के कारण पोपतंत्र विरोधी पूर्वाग्रहों की शुरुआत ग्यारहवीं और बारहवीं शताब्दियों से ही हो गई थी। बैंबर्ग के बिशप लुपर्ड ने इस बारे में अपनी पुस्तक *ट्रैक्टेट ऑन दि लाज ऑफ किंगडम एंड दि एंपायर* में लिखा था। उन्होंने जर्मन साम्राज्य को पोपतंत्र की सत्ता के नियंत्रण से स्वतंत्र करने का प्रयास

किया। मोजेनबर्ग के कॉनरैड ने भी अपने साहित्यिक लेखनों के जरिए जर्मन मानववादियों को प्रोत्साहित किया और पोप पर जेनरल काउंसिल की सत्ता को स्थापित किया। सेल्टिस और ग्रेगर और अन्य लेखकों ने राष्ट्रीय भावनाओं और पोतपंत्र की सत्ता की मानववादी आलोचनाओं को और भी सुदृढ़ किया। ग्रेगर ने भी पोपतंत्र पर भ्रष्टाचार और वित्तीय शोषण करने और जर्मन साम्राज्य के भीतर राजनीतिक मतभेद भड़काने के उसी प्रकार के आरोप लगाए जैसा कि लूथर ने लगाया था। उन्होंने अपने लेखनों में पोपतंत्र के कार्यों और ईसा मसीह द्वारा स्थापित मानकों के बीच विरोधाभास को उजागर किया।

मार्टिन लूथर ने 1520 में लिखी अपनी सुप्रख्यात पुस्तक *एन अपील टू दि जर्मन नोबिलिटी* में पोपतंत्र और याजकीय कुप्रथाओं को सूचीबद्ध किया। मानववाद के उदय ने वैयक्तिक चेतना और मानवीय गरिमता के विचार पर जोर दिया। इससे औचित्यीयकरण के सिद्धांत में नई अभिरुचि जगी जिसमें बताया गया कि किस प्रकार मनुष्य ईश्वर के साथ संबंध स्थापित कर सकता है। फिर भी मानववादी सुधार के प्रयास का चरित्र संभ्रांतवर्गीय था और इसे सीमित जनसमर्थन मिला। लूथर को व्यावहारिक सफलता उनके नरम रवैए के कारण मिली। इस विषय पर प्रचलित 'दोषमुक्ति' की ब्रिक्री की प्रथा ने मार्टिन लूथर के नेतृत्व में धर्मसुधार आंदोलन की चिनगारी जला दी।

पीयर शानु (*ली टेंप्स डेस रिफॉर्मेस*) तीन कारकों का उल्लेख करते हैं जो जर्मन धर्मसुधार आंदोलन के अनुकूल थे : रोम से दूरी, उस क्षेत्र में व्यापक साक्षरता और राजनीतिक शक्ति का विखंडन। वह जोर देकर कहते हैं कि वह राइनलैंड गलियारा था न कि लूथर का सैक्सनी, जहां धार्मिक परिवर्तन के लिए अपेक्षित सभी परिस्थितियां एक-साथ आकर मिल गईं।

मार्टिन लूथर के विचारों का अध्ययन करने से पहले यह जान लेना उपयोगी होगा कि दोषमुक्ति क्या थी। यह क्षमा के बदले कृतज्ञता की अभिव्यक्ति के रूप में धन या दान का उपहार देने के रूप में आरंभ हुई। बाद में यह चर्च की आय का एक महत्वपूर्ण स्रोत बन गई। आरंभ में दोषमुक्ति का अभिप्राय किसी किए गए पाप के लिए चर्च द्वारा दिए जाने वाले दंड से माफी होता था। बाद में यह न केवल चर्च द्वारा बल्कि ईश्वर द्वारा शोधनगृह में दिए जाने वाले दंड से माफी बन गई। इस प्रकार ईश्वर की दया को ब्रैंडेनबर्ग ने आल्ब्रेक्ट और फ्यूगर्स के बैंकिंग घराने के माध्यम से पोप के एजेंटों द्वारा वाणिज्यिक रूप में बेचा जाता था। दोजख की आग के डर से दोषमुक्ति लोगों के बीच लोकप्रिय हो गई। लोग इसे दैवी दंड से दया के लिए न केवल अपने बल्कि दूसरों के लिए खरीदते थे। माना जाता है कि ब्रैंडेनबर्ग के कार्डिनल आल्ब्रेक्ट ने शोधन गृह के दंडों से माफी के कुल 3,92,45,120 वर्ष सफलतापूर्वक संचित किए थे (मैक्ग्राथ)। लूथर के नेतृत्व में चलाया गया जर्मन धर्मसुधार आंदोलन चर्च द्वारा जनधर्मपरायणता के शोषण और धार्मिक सिद्धांतों को गलत ढंग से प्रस्तुत किए जाने के विरुद्ध सीधा हमला था।

मार्टिन लूथर और प्रोटेस्टेंट धर्मसुधार आंदोलन

मार्टिन लूथर (1483–1546) गांव के परिवेश से आए थे, यद्यपि उनके पिता खदानों में काम करके छोटे स्तर के बुर्जुआ बन गए थे। उनके पिता ने उन्हें अच्छी तालीम दी और उन्हें वकील बनाना चाहा। उनकी मां शहरी परिवेश से थी और अति धर्मपरायण थी। इससे निश्चय ही लूथर जर्मनी में प्रचलित धर्म के करीब आए होंगे। कानून की पढ़ाई करते समय लूथर में जबरदस्त धार्मिक रुझान देखे गए और 1505 में उन्होंने संत बनने का निश्चय कर लिया। अपने पिता की मर्जी के खिलाफ वह एरफर्ट में मठ-जीवन में प्रविष्ट हो गए। लूथर संत क्यों बन गए, इस बारे में कई रोचक कहानियां हैं। कहा जाता है कि लूथर को कई तरह का डर सता रहा था और जंगल में जब वह बादलों की गरज और बिजली कड़कने से बुरी तरह डर गए तो ईश्वर की प्रार्थना की और व्रत लिया कि वह साधु बन जाएंगे। एक दूसरे मत के अनुसार लूथर का अप्रत्याशित रूप से मृत्यु का सामना होने के कारण वह 'मठ जीवन' में प्रवेश कर गए।

लूथर के धर्मसुधार आंदोलन की शुरुआत एक साधारण से प्रश्न से हुई जो अकसर ईसाई प्रजा द्वारा पूछा जाता था—ईश्वर से क्षमायाचना के लिए क्या किया जाना चाहिए? लूथर का उत्तर चर्च की पारंपरिक रिवायतों में फिट नहीं बैठा और इसलिए उन्हें पोपतंत्रीय चर्च से अलग होना पड़ा। वह तुरंत एक जनसुधारक बन गए।

लूथर विटेनबर्ग विश्वविद्यालय में धर्मशास्त्र के प्रोफेसर थे। शिक्षा में उनकी गहरी रुचि थी। भाषाओं के लिए एक जन्मजात ललक थी। इतिहास का उन्हें अच्छा ज्ञान था। इन गुणों और वितंडावाद पर उनके विचार ने उन्हें मानववादियों के करीब ला दिया। फिर भी वे अपने समय के अन्य मानववादियों से दूरी रखते थे।

एक संत के रूप में लूथर की पहली चिंता मोक्ष प्राप्ति के विषय पर केंद्रित थी। इस बारे में प्रचलित मान्यताओं और प्रथाओं से वह संतुष्ट नहीं थे। कैथोलिक धर्म परमसंस्कारों को ईश्वर की दया प्राप्त करने का मुख्य स्रोत मानता था जबकि स्वीकारोक्ति (कनफेशन) पापों के लिए माफी मांगने का प्रमुख तरीका थी। 1517 में मार्टिन लूथर का सामना दोषमुक्ति की बिक्री की प्रथा से हुआ। उन्होंने इसकी कटु भर्त्सना की। उन्होंने विटेनबर्ग में चर्च के दरवाजे पर *नाइंटी फाइव थीसिस* चिपका दिया और उनसे असहमत सभी लोगों को इसका खंडन करने की चुनौती दी। इस कार्रवाई से लोग तुरंत उनकी ओर आकर्षित हुए। एंगेल्स ने रोमन कैथोलिक चर्च के खिलाफ लूथर के विद्रोह का 'लूथर्स लाइटनिंग स्ट्रक होम' (लूथर की बिजली रोमन चर्च पर गिरी) के रूप में वर्णन किया।

वर्ष 1517 ई. को धर्मसुधार आंदोलन की शुरुआत मानना एक आम धारणा बन गई है। लेकिन 1517 में लूथर का विरोध चर्च के मुख्य ढांचे और इसके सिद्धांत के खिलाफ

नहीं बल्कि उस धर्म सिद्धांत के खिलाफ था जो अभी भी विवादास्पद था। यह दरअसल कुछ रिवायतों की आलोचना थी, न कि अवज्ञा। इसके बाद के तीन वर्षों में उनकी धार्मिक गतिविधियों में तेजी आई। अंततः उन्होंने धर्मग्रंथों की व्याख्या करने की एकमात्र संस्था होने के चर्च के दावे को खारिज कर दिया। उन्होंने अनेक पुस्तिकाएं प्रकाशित कीं जिनमें पोप और उसके संगठन का खुलेआम विरोध किया गया। अपनी पुस्तक *दि फ्रीडम ऑफ दि क्रिश्चियन मैन* (1520) में लूथर ने यह कहा कि सच्ची आध्यात्मिक मुक्ति ईसा में आस्था के जरिए संभव है। 1521 में पवित्र रोमन सम्राट ने लूथर को वॉर्म्स स्थित डेट में मुकदमा का सामना करने के लिए उपस्थित होने के लिए कहा। लूथर ने अपना मत बदलने से मना कर दिया। इस प्रकार जर्मनी के सर्वोच्च नागरिक सत्ता द्वारा उन्हें कानून-विरोधी करार दे दिया गया। जीवनपर्यंत उन पर मृत्युदंड की सजा रही। लेकिन सैक्सनी के निर्वाचक फ्रेडरिक द्वारा उनका बचाव और समर्थन किया गया। फ्रेडरिक स्वयं अकादमिक केंद्र में पोपतंत्र के हस्तक्षेप के प्रयासों को पसंद नहीं करते थे। अपने छिपे रहने की अवधि के दौरान लूथर ने *न्यू टेस्टामेंट* (नव विधान) का अनुवाद किया। उनके विचारों के समर्थक लूथरंस या प्रोटेस्टेंट्स कहलाए।

लूथर पहले के धार्मिक विद्रोहियों की नियति से कई कारणों से बच निकले। पोप लियो दशम तुर्कों के खिलाफ धर्मयुद्ध की तैयारी में लगा था वहीं सम्राट मैक्समिलन उत्तराधिकार के मामलों में फंसा था। 1519 में उसकी मृत्यु हो गई। इसके बाद उसके उत्तराधिकारी के चयन के लिए काफी तीव्र अभियान शुरू हो गया। कोई भी भावी उम्मीदवार सैक्सनी के निर्वाचक (फ्रेडरिक) को नाराज नहीं कर सकता था क्योंकि चुनाव में उसका सहयोग बहुत महत्वपूर्ण था। जब तक चुनाव पूरा हुआ और स्पेन के चार्ल्स पवित्र रोम के सम्राट बने, लूथर के विचारों का तेजी से प्रसार हो चुका था और जर्मनी का अधिकांश कुलीन वर्ग उनके विचारों को स्वीकार करने लगा था। फ्रेडरिक का लूथर को सहयोग लूथर की सफलता की कुंजी था। मानववादी चांसलर जार्ज स्पैलेटिन ने भी न्यायालय में लूथर का समर्थन किया। हेस के फिलिप ने लूथर के प्रोटेस्टेंटवाद को राज्य के धर्म के रूप में अपनाया। बाद में ब्रुंशविक, वुटेनबर्ग, ब्रैडेनबर्ग और कई अन्य राज्यों और स्ट्रासबर्ग, ऑग्सबर्ग, न्यूरेमबर्ग आदि जैसे शाही नगरों द्वारा भी इसका समर्थन किया गया। फ्रेडरिक ने पोप और रोम के सम्राट की दंडात्मक कार्रवाइयों से बचाने के लिए वार्टबर्ग महल में लूथर के छिपकर रहने की व्यवस्था की। शाही स्वतंत्र नगर छापेखाने और मानववादी गतिविधियों के प्रमुख केंद्र थे। आरंभ में इनसे लूथर के विचारों के प्रसार में मदद मिली। इन शहरी केंद्रों ने चर्च के विशिष्ट स्थान का पहले ही प्रतिरोध करना शुरू कर दिया था। लूथर द्वारा पादरी वर्ग और जनसामान्य की समानता पर जोर दिए जाने से धर्मनिरपेक्ष सत्ता की प्रधानता स्थापित करने का एक बहुत अच्छा अवसर मिला। लूथर के विचार शहरों के मध्यम वर्ग—छोटे शहरियों, छोटे व्यापारियों, वणिकों और दस्तकारों को भी आकर्षित कर रहे थे। इस प्रकार शहर की

सरकारों ने आर्थिक लाभों और सामाजिक संस्थाओं पर नियंत्रण स्थापित करने के लिए चर्च पर अपनी सत्ता हासिल करना आरंभ कर दिया।

लूथर और किसान आंदोलन

लूथर के पोपतंत्रीय चर्च के साथ भिड़ंत ने 1525 में जर्मन किसानों को खुलेआम विद्रोह करने के लिए प्रेरित किया। इसमें लगभग 40,000 किसानों ने भाग लिया। शहर के लोग और कम मजदूरी पाने वाले खान मजदूर भी इसमें शामिल हो गए। यद्यपि किसान युद्ध एक समन्वित विद्रोह नहीं था और इसके अनेक नेता थे, फिर भी थामस मुंज़ेर ने थोड़े समय के लिए इस आंदोलन का सफलतापूर्वक नेतृत्व किया। उन्होंने सामंतों और चर्च के शोषण के विरुद्ध संघर्ष को संगठित किया। उनका 'टवेल्व आर्टिकल्स' कार्रवाई का कार्यक्रम था। यह काफी नरम प्रतीत होता है। इसकी मांग पूरी सामंती व्यवस्था को नष्ट करने या जमींदारों की भूमि को किसानों में बांटने की नहीं थी। जहां ग्रामीण 'टवेल्व आर्टिकल्स' के पैंफलेट्स बांट रहे थे, महलों और मठों को जला रहे थे, भूमि पर कब्जा कर रहे थे, पशुओं को ले जा रहे थे और कैथोलिक चर्च के अधिकारियों पर हमला कर रहे थे, वहीं हेब्रॉन शहरों के लोग सम्राट के लिए अधिक शक्ति, समान मुद्रा लागू करने और व्यापार को बढ़ाने के लिए करों की समाप्ति की मांग कर रहे थे। थूरिंजिया में किसान आंदोलन काफी व्यापक और सफल रहा। अंततः कुलीनों की निर्दयी ताकत ने इस आंदोलन को कुचल दिया।

यद्यपि जर्मनी के किसान आंदोलन की प्रकृति की विस्तृत चर्चा इस अध्याय में संभव नहीं है फिर भी इसकी सबसे महत्वपूर्ण बात धर्मसुधार आंदोलन के साथ इसका संबंध रही है। मार्क्सवादी लेखकों (एंगेल्स, कौत्स्की, बेलफोर्ट बैक्स, एम.एम. स्मिरन) के अनुसार किसान युद्ध सामाजिक-आर्थिक द्वंद्व की अभिव्यक्ति था और इसने बुर्जुआ क्रांति के आरंभिक दौर का निर्माण किया। वहीं धर्मसुधार आंदोलन इसकी विचारधारात्मक अभिव्यक्ति था। स्टिनमेज का तर्क है कि यह एक राष्ट्रीय आंदोलन था जो मार्टिन लूथर द्वारा आरंभ किया गया। इसने सभी वर्गों (चर्च से जुड़े राजकुमारों को छोड़कर) को पोपतंत्र के चर्च के खिलाफ मध्यम बुर्जुआ के नेतृत्व के अधीन ला दिया। यह नीचे से एक एकीकृत राज्य के निर्माण का जनसाधारण का पहला प्रयास था। दूसरी ओर पीटर बीकल्स कहते हैं कि किसान युद्ध 'ईसाइयत धर्मसिद्धांत' के आधार पर सामाजिक और सामंती संबंधों में क्रांतिकारी परिवर्तन के जरिए सामंतवाद के संकट पर काबू पाने का प्रयास था। इस क्रांति के वाहक किसान नहीं थे (जिन्होंने विद्रोह के केवल पहले दौर का नेतृत्व किया था) बल्कि सामान्य जन थे। इनमें किसान, खान मजदूर, प्रादेशिक शहरों के नागरिक और शाही नगरों के राजनीतिक दृष्टि से अधिकारविहीन लोग शामिल थे। इस आंदोलन के सामाजिक उद्देश्य 'ईसाई जनकल्याण' और 'बंधुत्व' थे। धर्मसुधार आंदोलन के साथ इसका सामंजस्य नहीं होने के कारण यह विफल हो गया।

किसान आंदोलन पोप की सत्ता के साथ लूथर के साहसिक टकराव से प्रेरित था। लेकिन लूथर कुलीन वर्ग का समर्थन खोना नहीं चाहते थे। कुलीन वर्ग किसानों से डरा हुआ था और इसलिए उसने विद्रोही किसानों की कटु आलोचना की। लूथर का राजनीतिक सत्ता का सिद्धांत किसान आंदोलन की पृष्ठभूमि में विकसित हुआ। अपने 'दो राज्य' (टू किंगडम्स) के सिद्धांत में उन्होंने 'आध्यात्मिक' और सांसारिक सरकार के बीच अंतर को स्पष्ट किया। ईश्वर का आध्यात्मिक शासन ईश्वर के वचन द्वारा और धर्मविधान के माध्यम से पवित्र आत्मा (होली स्पिरिट) द्वारा चलता है। इसमें किसी प्रकार का अवपीड़न नहीं हो सकता। ईश्वर का सांसारिक शासन राजाओं, राजकुमारों और मजिस्ट्रेटों के माध्यम से चलता है। वे धर्मनिरपेक्ष सत्ता के तलवार से इसे चलाते हैं। राज्य का विरोध करने के अधिकार के प्रश्न पर लूथर ने दकियानूसी रवैया अपनाया। उन्होंने शिकायतों को दूर करने के साधन के रूप में विद्रोह के सभी रूपों की भर्त्सना की। उनका तर्क था कि एक सच्चे ईसाई को राजा की सत्ता के खिलाफ लड़ने के बजाए अत्याचार और बुराई को सहन करना चाहिए। इसलिए लूथर के विचारों को शासक वर्ग के एक बड़े भाग का समर्थन मिला।

लूथर का धर्म

लूथर का धर्मसुधार इस प्रश्न से आरंभ हुआ कि खुद को बचाने के लिए इनसान क्या करे। इसी से उनके आस्था के द्वारा दोषमोचन के सिद्धांत का विकास हुआ। लूथर का मानना था कि चर्च ने धर्मविधान और ईसाइयत के सार का दोषमुक्ति की बिक्री जैसी रिवायतों को अपनाकर दुरुपयोग किया है। लूथर के विचार इस प्रश्न से संबंधित थे कि एक पापी के लिए यह किस प्रकार संभव है कि वह सदाचारी ईश्वर के साथ संबंध स्थापित करे। लूथर के अनुसार पापी जब ईश्वर की अनुकंपा की आवश्यकता महसूस करता है तो वह उसका स्मरण करता है। ईश्वर उसे क्षमादान देने के लिए बाध्य है। इसे पैसों से बेचा या खरीदा नहीं जा सकता। एलिस्टर ई. मैक्ग्राथ कहते हैं, यह क्षमादान का एक नया धर्मशास्त्र था। इससे पोप, पादरियों और कई अन्यों के निहित स्वार्थ के लिए खतरा पैदा हो गया।

लूथर ने 'परमसंस्कारों' (सैक्रेमेंट्स) पर कैथोलिक चर्च के विचारों की भी आलोचना की। इसमें सात परमसंस्कार शामिल थे—बपतिस्मा, यूखारिस्त या मिस्सा, शादी, पश्चाताप, पुष्टि, अभिषेक और प्रभु-भोज। लूथर ने इनमें केवल दो को ही माना—बपतिस्मा और यूखारिस्त—अथवा प्रभु-भोज। बपतिस्मा किसी बच्चे या गैरईसाई को ईसाई धर्म में शामिल करने और ईसाई नाम देने का उत्सव है जबकि यूखारिस्त ईसाइयों का पवित्र प्रभु-भोज है जहां अपने बीच ईसा की उपस्थिति करने के लिए ब्रेड और वाइन लिया जाता है। वह मानते थे कि मध्यकालीन परमसंस्कार पादरियों को बिलकुल अनुचित श्रेष्ठता प्रदान करते हैं। लूथर के अनुसार परमसंस्कार के दो प्रमुख लक्षण थे—ईश्वर के वचन और एक बाहरी संकेत। उनके अनुसार तत्व परिवर्तनन का सिद्धांत गलत रिवायतों को उचित ठहराने के लिए अपनाया गया ढोंग था। पादरी आम लोगों को वाइन और ब्रेड में ईसा की भौतिक उपस्थिति का अहसास कराते थे। इस चमत्कार के नाम पर वे उनसे धन इकट्ठा करते थे। लोगों की ओर से पादरियों द्वारा ईश्वर को चढ़ावा चढ़ाने या त्याग करने के विचार को लूथर धर्मग्रंथों के विरुद्ध मानते थे। उनके अनुसार परमसंस्कार लोगों की आस्था का विषय है। यह खरीदी या बेची जाने वाली कोई वस्तु नहीं है।

लूथर के धर्म को उनके साथी प्रोफेसर मेलांक्थॉन ने एक सांगठनिक ढांचा और निश्चित आकार दिया। उन्होंने तीन पुस्तिकाएं (थ्री ट्रैक्ट्स) तैयार करने और आस्था की प्रधानता पर आधारित नए ईसाई पंथ की स्थापना में लूथर की सहायता की। पादरियों की एक अलग जाति है जिसे विशिष्ट रहस्यात्मक कार्य करने की शक्ति प्राप्त है, इस पंथ ने इस विशिष्ट धारणा को नष्ट कर दिया। लूथर ने घोषणा की कि प्रत्येक ईसाई अपना पादरी स्वयं है। चर्च के बाहरी आदेश लूथर के लिए खास महत्व नहीं रखते थे। मुक्ति एक अंदरूनी आस्था है न कि बाह्य, सामाजिक और राजनीतिक स्वतंत्रता। लूथर के धर्म ने धर्मग्रंथों को ईसाई धर्म का एकमात्र प्रामाणिक स्रोत बना दिया। उन्होंने बाइबिल का जर्मन में अनुवाद किया ताकि सभी लोग इसे आसानी से समझ सकें। छापेखाने ने इसमें अहम भूमिका अदा की। उन्होंने चर्च के अधिकारियों—पोप, कार्डिनल और बिशप से लेकर पादरी तक के वरीयताक्रम को समाप्त कर दिया। धर्म को काफी सरल और बाइबिल की मूल शिक्षा तक सीमित बना दिया गया। धार्मिक सेवा एक सामुदायिक कार्य बना दिया गया और स्तोत्रगान सहभागिता का संकेत। इसके लिए लूथर ने अपने अनुयायियों के लिए ईंजलवादी प्रार्थनागान (इवैंजेलिकल हिंमबुक) प्रकाशित करवाया। उन्होंने मठों को और पादरियों द्वारा ब्रह्मचर्य पालन की प्रथा को समाप्त किया। लूथर ने स्वयं पादरी वर्ग के आचरण के लिए पोप के नियमों का उल्लंघन करते हुए एक किसान संन्यासिन से शादी की। इस प्रकार उन्होंने धार्मिक और सामाजिक-राजनीतिक मामलों के बीच भेद को स्पष्ट किया और धर्म की सर्वव्यापी भूमिका को नष्ट कर दिया।

इस प्रकार लूथर के आंदोलन ने यूरोपीय चर्च में एक तीक्ष्ण विभाजन कर दिया और पोपतंत्र के वर्चस्व को समाप्त कर दिया। अनेक जर्मन राजकुमारों ने लूथर में चर्च और सम्राट चार्ल्स पंचम से अपेक्षाकृत अधिक स्वतंत्रता प्राप्त करने का अवसर देखा। अतः लूथर का धर्मसुधार आंदोलन नार्वे, स्वीडेन और डेनमार्क जैसे स्कैंडेनेवियाई देशों में तेजी से फैला। इसका प्रसार बाल्टिक प्रदेशों में भी हो गया।

कैथोलिक्स और प्रोटेस्टेंट अनुयायियों के बीच चली लंबी लड़ाई का अंत 1555 में आग्सबर्ग शांति समझौते के साथ हुआ। तीन सौ से भी अधिक जर्मन राजकुमारों में से प्रत्येक को अपना धर्म चुनने का अधिकार मिल गया। उनकी प्रजा को उनके द्वारा चुने गए धर्म का पालन करना पड़ता था।

हल्ड्रेइच ज्विंगली

ज्विंगली लूथर के समकालिक थे। उन्होंने ज्यूरिक के स्विस परिसंघ में धर्मसुधार चलाया। लूथर के सुधारों की उत्पत्ति अकादमिक क्षेत्र में हुई जबकि ज्विंगली के सुधारों के लक्ष्य चर्च, इसके सिद्धांत, बाइबिल के उपदेशों पर आधारित नैतिकता और पूजा थे। उनका यह धर्मसुधार आंदोलन मानववादियों के विचारों पर आधारित था। कुछ समय तक बास्ले में रहने और इरेस्मस की पुस्तकों के अध्ययन से ज्विंगली को ईसाइयत की एक अलग समझ मिली। लूथर के साथ ऐसी बात नहीं थी। मानववादी आंदोलन के साथ उनका इस प्रकार का संबंध नहीं था। ज्विंगली अनिवार्य रूप से मानववादी थे और वह इरेस्मस से बहुत अधिक प्रेरित थे। उन्होंने बाइबिल का गहन अध्ययन किया था। इससे वह रोमन कैथोलिक चर्च के कुछ उपदेशों पर प्रश्न करने लगे। अपने धार्मिक उपदेशों में उन्होंने नए विचार व्यक्त किए। उनका वास्तविक धर्मसुधार 1520 में आरंभ हुआ और यह पांच वर्षों में पूरा हुआ।

जौं वर्थ के अनुसार (*रिलिजन एंड सोसाइटी इन अर्ली मॉडर्न यूरोप, 1500–1800*) ज्विंगली एक संस्कृति-संक्रामी सुधार के सर्वाधिक विकसित चित्र थे। वह कड़े अनुशासित सुधार लागू करने के लिए प्रभावशाली वर्गों के समर्थन पर निर्भर करते थे। उनके प्रभाव में आकर ज्यूरिक में बुर्जुआ प्राधिकारियों ने लोगों पर गिरजे-संबंधी जीवन का एक ऐसा रूप थोप दिया जो उनकी परंपराओं और भावनाओं के विपरीत था। उच्च मध्यम वर्ग के पास पढ़ने-लिखने की क्षमता थी इसलिए इन्होंने मानववादी सुधार कार्यक्रम को अपनाया। ऐसा प्रतीत होता है कि ज्विंगली धर्मसुधार के एक साधारण रूप से विकास को तरजीह देते थे। धर्मसुधारक के रूप में उनका प्रभाव सितंबर 1523 के बाद स्पष्ट रूप से सामने आया।

ज्विंगली एक प्रभावशाली धर्मोपदेशक थे। उन्होंने उपदेश देने की सरल और सीधी शैली अपनाई जिसे लोग आसानी से समझ सकते थे। अपने प्रवचनों में वह स्विस राष्ट्रप्रेम का भाव भर देते थे और प्रायः समयुगीन घटनाओं का उल्लेख करते थे। उनकी भाषण-कला का पूरा प्रदर्शन तब हुआ जब 1523 में प्रतिनियुक्ति के लिए बिशप के प्रतिनिधि से उनका सामना हुआ जहां नगर परिषद का पूरा समर्थन उनके साथ था।

लूथर के धर्मसुधार आंदोलन और ज्विंगली के धर्मसुधार आंदोलन के बीच कुछ समानताएं थीं। दोनों ने मध्यकालीन परमसंस्कारों को अस्वीकार किया और ईश्वर के वचन पर जोर दिया। दोनों ने बच्चे के बपतिस्मा की परंपरा को अपनाया लेकिन अलग-अलग कारणों से। वे 1529 में अपने मतभेदों को दूर करने के लिए बारबर्ग में मिले ताकि एकीकृत धर्मसुधार आंदोलन को मजबूत किया जा सके। एक बिंदु को छोड़कर वे सभी बिंदुओं पर सहमत हो गए और वह था 'प्रभु-भोज' का प्रश्न। लूथर के अनुसार ईसा मसीह दरअसल यूखारिस्त में मौजूद हैं जबकि ज्विंगली मानते थे कि वह केवल अपने मानने वालों के दिलों में रहते हैं। ज्विंगली ने इस अवसर को यादगार माना जबकि लूथर ने इसके शाब्दिक अर्थ पर जोर दिया और ज्विंगली के प्रति उनके मन में कड़वाहट भर गई। लूथर ने ज्विंगली के बंधुत्व के प्रस्ताव को यह कहकर ठुकरा दिया कि 'तुम्हारी आत्मा हमसे अलग है'।

ज्विंगली के तत्वावधान में स्विस धर्मसुधार आंदोलन ने चर्च के निगमित स्वरूप पर जोर दिया। इसने एक 'पवित्र समुदाय' का निर्माण करके पादरी वर्ग और जनसामान्य को समान स्तर पर लाने के लिए कार्य किया। इस समुदाय के भीतर धर्मनिरपेक्ष भावना और धार्मिक पूजा गहरी रूप से जुड़ी थी। ज्यूरिक की परिषद ने बपतिस्मा, यूखारिस्त और शव-संस्कार के लिए शुल्क वसूलने की प्रथा का विरोध करने का निर्णय किया। पादरी वर्ग को केवल धर्मग्रंथों से ही उपदेश देना था और चर्चों में केवल मूल बाइबिल का पाठ किया जाना था। धर्मोपदेश देना चर्च का एक अहम कार्य था। प्रतिमाओं और पुरावशेषों को नए रूप दिए गए, जुलूसों पर प्रतिबंध लगा दिया गया और मोमबत्तियों और पवित्र जल का त्याग कर दिया गया। मिस्सा (मैस) का लातिन संस्कार जर्मन में किया जाने लगा। लूथर ने ईश्वर के राज्य को धर्मनिरपेक्ष जगत से अलग किया था जबकि ज्विंगली ने दोनों को जोड़ दिया।

ज्यूरिक में धर्मसुधार आंदोलन का काफी बड़ा सामाजिक प्रभाव पड़ा। मठों को समाप्त कर दिया गया और मठ संबंधी परोपकार सामुदायिक सरोकार बन गया। मठों को अनाथालयों और अस्पतालों में बदल दिया गया। उनकी संपत्ति का उपयोग गरीबों की मदद के लिए किया जाता था। बिशप के न्यायाधिकार को एक नागरिक निकाय को दे दिया गया। समाज में नैतिक अनुशासन लाने के लिए शादी के विवादों से निपटने हेतु एक नए न्यायालय की स्थापना की गई। चर्च और नैतिक अनुशासन का संयुक्त रूप से पर्यवेक्षण चर्च और राज्य द्वारा किया जाता था। उन्हें साथ मिलकर एक 'पवित्र समुदाय' का निर्माण करना था। 1529 में चर्च में उपस्थिति को अनिवार्य बना दिया गया। मजिस्ट्रेट की शक्ति को पादरी वर्ग के साथ मिला दिया गया। इस प्रकार चर्च और राज्य को पूर्ण रूप से मिला दिया गया। इसे 'दंडाधिकारी सुधार' के रूप में जाना जाने लगा। यह अनिवार्यतः सिद्धांत विषयक और पूजन-पद्धति संबंधी सुधार था और लूथर के सुधार से अधिक उग्र था। कैपेल युद्ध (1531) में ज्विंगली की मृत्यु के बाद उनके उत्तराधिकारी बुलिंगर ने सुधारों को आगे जारी रखा। उस युद्ध में वह पुरोहित के रूप में सेना के साथ-साथ चल रहे थे।

जॉन केल्विन

जॉन केल्विन (1509–1564) सुधारकों की दूसरी पीढ़ी से थे। उन्हें सबसे प्रभावशाली सुधारक माना जाता है क्योंकि यूरोप के अलग-अलग हिस्सों में उनका जबरदस्त प्रभाव था। केल्विन बहुत बड़े विद्वान थे और तार्किक बुद्धि रखते थे। उनके कई विचार बाइबिल

से लिए गए थे। लेकिन वह संत ऑगस्टाइन से भी प्रभावित थे।

फ्रांस के शासकों द्वारा उन पर धार्मिक मुकदमा चलाए जाने के कारण केल्विन को फ्रांस छोड़ना पड़ा। यात्रा के दौरान वह विलियम फेरेल के संपर्क में आए। फेरेल चर्च में सुधार के लिए जेनेवा में अकेले लड़ रहे थे। फेरेल ने उनसे जेनेवा में रुक कर उनके कार्य में मदद करने का आग्रह किया। जेनेवा का धर्मसुधार आंदोलन सेवोय के ड्यूक्स और जेनेवा के बिशपों के खिलाफ शहर की आजादी के लिए सशस्त्र संघर्ष से गहरे रूप से जुड़ा हुआ था। जेनेवा ने बर्न और फ्रिबॉर्ग जैसे स्विस प्रांतों के साथ गठबंधन कर लिया और 1815 में यह स्विटजरलैंड का एक अंग बना। जेनेवा के भीतर लिबर्टाइन्स और फेरेल और केल्विन के बीच एक संघर्ष चल रहा था। लिबर्टाइन्स पादरी वर्ग पर मजिस्ट्रेटों को स्थापित कर साधारण सुधार करना चाहते थे जबकि फेरेल और केल्विन आमूल परिवर्तनों और शासकीय नियंत्रण की वकालत करते थे। केल्विन और फेरेल को 1538 में जेनेवा छोड़ना पड़ा लेकिन 1541 में उन्होंने सफल वापसी की। केल्विन के प्रयासों ने रंग लाया। शीघ्र ही जेनेवा प्रोटेस्टेंट धर्म का प्रमुख केंद्र बन गया। सुदूर क्षेत्रों से लोग वहां नए विचारों का अध्ययन करने और बौद्धिक अनुभव लेने आते थे। केल्विन ने अलग-अलग देशों से प्रोटेस्टेंट धर्मसुधारकों की एक नई पीढ़ी तैयार की और इस प्रकार जेनेवा को अंतरराष्ट्रीय प्रोटेस्टेंटवाद का मुख्य केंद्र बना दिया।

केल्विन इरेस्मस और अपने समय के अन्य मानववादियों से बहुत अधिक प्रभावित थे। आम तौर पर यह माना जाता है कि 1533 या 1534 में केल्विन नरम मानववादी से एक क्रांतिकारी सुधारक बन गए। वह लूथर के इस विचार से सहमत थे कि केवल आस्था से मोक्ष मिल सकता है। उन्होंने ईश्वर के साथ मनुष्य के सीधे संपर्क के सिद्धांत का समर्थन किया। इससे परे केल्विन के विचारों में हम थोड़ा अंतर पाते हैं। ईश्वर की परम संप्रभुता में उनके विश्वास ने उनके धर्मोपदेशों को एक विलक्षण चरित्र प्रदान किया। ईश्वर की संप्रभुता को चर्च के माध्यम से व्यक्त किया जाना था। केल्विन चर्च को एक दैवी संस्था मानते थे, जो कि राज्य की सत्ता से बिलकुल स्वतंत्र है।

केल्विन मानते थे कि ईश्वर देश और काल की सीमा से परे है और वह सर्वशक्तिमान है। मनुष्य ईश्वर की रचना है और उसका यह कर्तव्य है कि वह स्वयं को ईश्वर पर न्यौछावर कर दे। मोक्ष की योजना धर्मग्रंथों में दी गई है। वह महसूस करते थे कि परमसंस्कार आस्था के महज बाह्य संकेत हैं। मोक्ष की कुंजी बाइबिल है। यह आस्था का सबसे बड़ा स्रोत है और सभी को इसके आगे नतमस्तक होना है। केल्विन के अनुयायी अपने संभावित मोक्ष के प्रति आश्वस्त थे। इसके लिए उन्हें केल्विन द्वारा विहित तीन प्रकल्पित परीक्षणों से गुजरना था। पहला, धर्म की खुली स्वीकृति; दूसरा, एक मर्यादित और धर्मपरायण जीवन; और तीसरा, बपतिस्मा और प्रभु-भोज के परम संस्कारों में भागीदारी। केल्विन के अनुसार चर्च का वास्तविक कार्य ईश्वर के शब्दों का सही-सही प्रचार करना और परमसंस्कारों को उचित ढंग से कराना था। उनके कर्मकांड लूथर के कर्मकांडों से भी सरल थे। पूजा में अनिवार्य रूप से धर्मोपदेश, प्रार्थना और भजन गाना था। लूथर के समान ही उन्होंने भी केवल दो परमसंस्कारों—बपतिस्मा और यूखारिस्त को माना। केल्विन की पुस्तक *इंस्टीट्यूट्स ऑफ दि क्रिश्चियन रिलिजन* (1536) का प्रथम संस्करण प्रोटेस्टेंट धर्मशास्त्र की सबसे प्रभावशाली पुस्तक थी। यह उनके तीक्ष्ण दिमाग और विधिक मस्तिष्क को दरशाती है। मूल रूप से यह लैटिन में लिखी गई थी लेकिन 1541 में फ्रांसीसी में इसके प्रकाशन ने फ्रांसीसी देशी साहित्य के विकास में बहुत बड़ा योगदान दिया। बाद में इसमें कई बार परिवर्तन और परिवर्द्धन किए गए। 1559 में इसे अंतिम रूप दिया गया।

केल्विन ने चर्च की संरचना और अनुशासन पर अपने विचारों के जरिए धर्मसुधार आंदोलन में सबसे बड़ा योगदान दिया। जेनेवा के चर्च की संरचना में चार प्रमुख संस्थाएं थीं। पुरोहित (पास्टर्स) ईसा के वचनों का प्रचार करते थे। धर्माचार्य (डॉक्टर्स) विद्वान होते थे जो बाइबिल के विभिन्न भागों का अध्ययन करते थे और उन्हें लिखते थे। ये दोनों चर्च के उच्च स्तरीय अधिकारी माने जाते थे। उपयाजक (डीकंस) और गुरुजन (एल्डर्स) निम्न स्तर के अधिकारी थे। इनका काम सामाजिक व्यवहार और नैतिक मानकों को देखना होता था। ये पोशाक, यौनाचार, चर्च में उपस्थिति पर सख्त अनुशासन रखते थे और अनैतिक व्यवहार, व्यभिचार, वेश्यावृत्ति और अन्य दुष्कर्मों के लिए कठोर दंड देते थे। यद्यपि केल्विन के चर्च पर अति करने और बहुत अधिक विनियमन करने का आरोप लगाया जाता है, फिर भी संपन्न व्यापारी और दुकानदार इसके कठोर अनुशासन की बहुत प्रशंसा करते थे। इसके अनुशासन से जेनेवा की संपन्नता बढ़ी और उपद्रवियों की अनुशासनहीनता को नियंत्रित किया जा सका। जेनेवन चर्च की केल्विन द्वारा निर्मित संरचना पूरे यूरोप के सुधारकों के लिए एक आदर्श बन गई।

केल्विन की सामाजिक विचारणा का सबसे महत्वपूर्ण तत्व पूर्वनियति का सिद्धांत था। इस सिद्धांत का एक महत्वपूर्ण कार्य ईश्वर की दयालुता पर बल देना था। लूथर और ज्विंगली के समान ही केल्विन ने भी कहा कि मोक्ष ईश्वर की दया से प्राप्त होता है। लेकिन वह मानते थे कि ईश्वर ने व्यक्ति विशेष के जन्म के पहले ही उसका मोक्ष या नरकवास तय कर दिया है। लूथर के अनुसार ईश्वर की दयालुता अपने उन भक्तों को मोक्ष प्रदान करने में झलकती है जो सच्चे दिल से प्रार्थना करते हैं। केल्विन के अनुसार व्यक्ति विशेष के गुण या दोष से परे उसका मोक्ष पूर्वनिर्धारित है। यद्यपि यह सिद्धांत केल्विन की विचारणा का केंद्र नहीं था, फिर भी यह बाद के धर्मसुधारकों की विचारणा का केंद्रबिंदु अवश्य बन गया। केल्विनवाद की सफलता इसके प्रभावी संघटन और विचारणा की स्पष्टता के कारण थी।

यह माना जाता है कि केल्विन की सामाजिक विचारणा ने अप्रत्यक्ष रूप से वाणिज्यिक गतिविधियों को आगे बढ़ाया। समाज के लिए धन को बुराई नहीं बल्कि एक आवश्यकता समझा जाता था। उनका मानना था कि धन का उपयोग लाभ की कामना के लिए नहीं

बल्कि न्याय और समानता के नियमों के अनुसार किया जाना चाहिए। केल्विन ने उत्पादन के उद्देश्य से लिए गए ऋण पर मामूली ब्याज लेने की अनुमति दी थी। वह सूदखोरी के खिलाफ थे। दरअसल केल्विन आर्थिक गतिविधि को समाज की जरूरतों से जोड़कर देखते थे। कई इतिहासकारों का मानना है कि केल्विन की उत्पादन से संबंधित ऋण पर ब्याज की औचित्यता ने यूरोप के आर्थिक क्षेत्र को सकारात्मक रूप से प्रभावित किया।

केल्विनवाद का प्रसार

यूरोप के अनेक भागों में अपने विचारों के प्रसार में केल्विन ने महत्वपूर्ण भूमिका अदा की। वह एक असाधारण नेता और संगठनकर्ता थे। उन्होंने फ्रांस, नीदरलैंड्स, स्कॉटलैंड और अन्य भागों में अपने सुधारों को आगे बढ़ाने के लिए मिशनरियों को भेजा। 1559 में जेनेवन अकादमी की स्थापना की गई। यह प्रोटेस्टेंट आंदोलन के नेताओं को प्रशिक्षण देती थी। केल्विन को पूरा यकीन था कि एक न एक दिन फ्रांस सच्चा ईसाई राष्ट्र बन जाएगा और उन्होंने इसके लिए प्रयास भी किया।

फ्रांस

कुछ विद्वानों द्वारा यह तर्क दिया जाता है कि संगठित चर्चों के लिए जिस प्रकार के नेतृत्व की आवश्यकता थी, फ्रांस में स्थिति इन सुधारों के अनुकूल नहीं थी। मो के बिशप विलियम ब्रिकोनेत, प्रख्यात मानववादी जॉक लेफ़ेव्र दे देतोपल्प्स और सम्राट की बहन मार्गराइत द अगूलेम—इन तीन शख्सियतों में से कोई भी यह नेतृत्व प्रदान कर सकते थे। लेकिन ऐसा नहीं हुआ। लेफ़ेव्र (1450–1537) सोलहवीं सदी के बाइबिल के एक बहुत बड़े विद्वान थे। 1509 में उनके स्क्रिप्चर्स का पहला संस्करण प्रकाशित हुआ। इसकी शुरुआत स्तोत्र से की गई थी। उस समय यह यूरोप की सबसे प्रशंसित पुस्तक थी। 1523 में इसका देसी बोली फ्रेंच में अनुवाद किया गया। इसके बाद 1530 में बाइबिल का फ्रेंच में अनुवाद हुआ। अपने जीवन के अंतिम वर्षों में उन्होंने स्वयं एकांतवास ले लिया और मार्गराइत द अगूलेम के दरबार में उनकी मृत्यु हो गई। मार्गराइत अति प्रतिभावान महिला थी। कई विद्वानों ने भी उनकी प्रशंसा की। उनकी सर्जनाज्मकता उनकी मशहूर कविताओं में झलकती है जैसे कि *दि मिरर ऑफ दि क्रिश्चियन सोल* (1531), *पर्ल्स फ्रॉम दि पर्ल ऑफ प्रिंसेस* (1547), और मरणोपरांत पुस्तक *हेप्टामेरॉन* (1559), जो कि एक ईसाई मत के प्रचार संबंधी संग्रह है।

केल्विनवाद के प्रसार के पहले फ्रांस में धर्मसुधार के लिए भूमि तैयार करने वाला कोई मशहूर व्यक्ति नहीं था। फ्रांस के प्रमुख मानववादी भी आस्था के द्वारा दोषमोचन में विश्वास करते थे लेकिन वे इसमें बहुत आगे बढ़ने के लिए तैयार नहीं थे। लेफ़ेव्र के शिष्य ब्रिकोनेत ने सुधार संबंधी कार्य आरंभ किया और नए विचारों के उपदेशकों को भी आमंत्रित किया। लेकिन वह भी रोम के साथ संबंध तोड़ने को तैयार नहीं थे। ये तीनों लोग सुधार के जरिए एक नए धर्म या एक नए चर्च के निर्माण की आवश्यकता नहीं समझते थे और इस प्रकार के प्रयासों को नेतृत्व देने के इच्छुक नहीं थे। अतः फ्रांस में उग्र विचारधारा से प्रेरित सुधारों में रुचि रखने वालों ने जर्मनी के राइन क्षेत्र, खास तौर पर स्ट्रॉसबर्ग और बास्ल का रुख किया। आरंभिक दौर के फ्रांसीसी सुधारकों पर स्ट्रॉसबर्ग का बहुत बड़ा एहसान था। धर्मसुधार आंदोलन के प्रति फ्रांसीसी राजाओं का रवैया शत्रुवत रहा। उन्हें इस प्रकार के सुधारों से अराजकता फैलने और गृहयुद्ध होने का खतरा महसूस होता था जैसा कि जर्मनी में हुआ था। इसलिए ईश्वरनिंदा के विरुद्ध नियम सख्त बना दिए गए और फ्रांसीसी प्रोटेस्टेंट अनुयायियों को, जो *ह्युनॉट्स* कहलाते थे, सख्ती से बाहर निकाला जाने लगा। यद्यपि *ह्युनॉट्स* अल्पसंख्यक थे, फिर भी वे पुराने अल्बीजेंसियन क्षेत्रों और बड़े नगरों में एक राजनीतिक और धार्मिक समूह बनाकर उभरने लगे।

प्रोटेस्टेंटवाद फ्रांस में देर से पहुंचा। फ्रांसीसी शासकों ने इसके प्रसार को अनेक उपायों से रोकना चाहा। पंद्रहवीं सदी के दौरान पोपतंत्र ने फ्रांसीसी राजाओं को अनेक रियायतें दी थीं जिन्हें 1516 में कानकोर्दात ऑफ बोलोना में संहिताबद्ध कर दिया गया था। इनके जरिए फ्रांसीसी शासकों को चर्च संबंधी नियुक्तियां करने का अधिकार प्राप्त हो गया था। चर्च के वित्त पर भी उनका जबरदस्त नियंत्रण था। इसलिए लूथरवाद को चर्च के मामलों में शासकों के विशेषाधिकार की दृष्टि से खतरा माना जाता था। यह तो केल्विनवाद की सफलता थी जिसने फ्रांसीसी समाज को धार्मिक आधार पर बांटना शुरू कर दिया। केल्विनवादियों की प्रगति और उनके उत्पीड़न का फ्रांस ही सबसे अच्छा उदाहरण है। 1534 के शरदकाल में पेरिस में 'दि अफेयर्स ऑफ प्लैकार्ड्स' के परिणामस्वरूप प्रोटेस्टेंट अनुयायियों पर मुकदमा चलाने की सुस्पष्ट नीति बनी। रविवार, 18 अक्टूबर को शहर की अनेक दीवारों पर अनेक प्रोटेस्टेंट इश्तहार नजर आए। इसमें लिखा था, 'पोप के मिस्सा के भयानक और असह्य कुप्रथाओं के वास्तविक सूत्र।' बाद में पता चला कि यह देश से निष्कासित प्रोटेस्टेंट एंतोइन मार्कोर्ट के हाथों से आया होगा। ऐसा प्रतीत होता है कि यह घटना फ्रांसीसी प्रोटेस्टेंट आंदोलन को स्पष्ट रूप से विद्रोहियों के धर्म में बदलने में काफी अहम थी (मार्क ग्रीन ग्रास)। शासकों ने इसे कुचल देने की ठानी। 1542 के बाद विधर्म के मामलों पर सख्ती से निर्णय दिया जाता था। विधर्म की परिभाषा को काफी व्यापक बना दिया गया था। 1551 में शातोब्रियांत और 1557 में कॉम्पेन के आदेशपत्रों में उन व्यक्तियों के खिलाफ उपबंध शामिल किए गए जो जेनेवा के साथ पत्राचार करते थे या कोई संपर्क रखते थे। 1560 तक केल्विनवाद ने कुलीन वर्ग में अपनी महत्वपूर्ण पकड़ बना ली थी। इसका प्रसार सर्वोच्च दरबार और अभिजात वर्गों में हो गया जिसमें हाउस ऑफ बूर्बो शामिल था। इसने प्रांतीय कुलीन वर्ग, व्यापारियों, वकीलों, शहरी निवासियों और

अभिजातवर्गीय महिलाओं के बीच भी अच्छी पैठ बना ली। 1559 तक पूरी आबादी का लगभग दसवां भाग ह्युनॉट्स का था। बड़े प्रांतीय शहरों में इसके करीब एक हजार धर्मसंघ थे। अभिजात वर्गीय महिलाएं उनकी ग्राही श्रोता थीं। वे कैथोलिक शासकों द्वारा केल्विनवादियों के जबरदस्त उत्पीड़न के बावजूद उनके अनुभवहीन भक्त मंडलियों को आश्रय देती थीं। घुड़सवारों की बरछीबाजी की प्रतियोगिता में हेनरी द्वितीय (1559) की अचानक मृत्यु के बाद धार्मिक मामला सामने आ गया। राजतंत्र कमजोर हाथों में आ गया और कैथरीन डी मेदिचीज वास्तविक सत्ता का उपयोग करने लगी। उनकी तीन बेटियां और चार बेटे थे। सबसे बड़ा बेटा फ्रैंसिस द्वितीय पंद्रह वर्ष का था। सबसे शक्तिशाली कैथोलिक परिवार—दि गाइज ने रोमन कैथोलिक गुट का नेतृत्व संभाल लिया। यह शासकों और उनकी उत्पीड़न की नीति का समर्थक था। फ्रांसीसी गृहयुद्ध का पर्याप्त कारण केवल धर्म ही नहीं था। अन्य कारण भी थे जैसे राजतंत्र की कमजोरी और अभिजातवर्गीय महत्वाकांक्षा। प्रोटेस्टेंट अनुयायी फ्रांस के दक्षिण और पश्चिम में मजबूत थे जबकि कैथोलिकों की शक्ति उत्तरी भाग और पेरिस में केंद्रित थी। इससे उन्हें काफी लाभ हुआ और वे शासकों को नियंत्रित कर सके।

प्रोटेस्टेंट आंदोलन को बूर्बो परिवार ने अपने हाथ में ले लिया। इसका शाही परिवार से संबंध था। कैथरीन की रुचि शांति स्थापित करने में थी क्योंकि किसी भी युद्ध से राज्य के कमजोर होने की संभावना थी। इससे सम्राट के प्रति उसकी निष्ठा प्रभावित होती। वह बूर्बों के साथ अपनी बातचीत में विफल हो गई। प्रोटेस्टेंट अनुयायियों और कैथोलिकों दोनों ने अपने-अपने हितों की रक्षा के लिए लड़ने हेतु सेनाएं बनाईं। 1562 में कैथोलिकों और ह्युनॉट्स के बीच गृहयुद्ध शुरू हो गया। जेनेवा के नेताओं ने ह्युनॉट्स को हर सहायता दी। 1563 में जब एक प्रोटेस्टेंट उन्मादी ने ड्यूक द गीज़ की हत्या कर दी तो इस लड़ाई का समाधान निकलना असंभव-सा हो गया। 1563 में युवक राजा चार्ल्स नवम ने 'अंबूआज़ का आदेशपत्र' जारी किया। इसमें गैर कैथोलिकों के लिए खुली पूजा-अर्चना की छूट दे दी गई। कैथोलिक नेताओं ने प्रोटेस्टेंट धर्मसंघों पर हमला करके और उनके नेताओं की हत्या करके इस आदेश की अवज्ञा की। इस युद्ध ने फ्रांस का भौतिक विभाजन कर दिया और राजाओं की भूमिका को महत्वहीन बना दिया। फ्रांसीसी शासकों की आकांक्षाओं की तनिक भी परवाह नहीं करते हुए गीज़ परिवार ने स्पेन से सहायता मांगी, जबकि ह्युनॉट्स ने अपने उद्देश्य के लिए लड़ने के लिए स्विस और जर्मनी के भाड़े के सैनिकों को बुलाया। कैथरीन द्वारा अपनी बेटी मार्गरेट की शादी नवारे के हेनरी के साथ करने की योजना की घोषणा से समाधान निकलने की आशा जगी। शादी अगस्त 1572 में होनी तय हुई। फ्रांस में इसे एक बड़ी घटना के रूप में देखा जा रहा था। इससे वेलुआ और बूर्बों परिवारों के बीच संधि होने और इस प्रकार शांति के एक युग की शुरुआत होने की संभावना थी। जब भारी संख्या में ह्युनॉट्स शादी में भाग लेने के लिए आए तो स्थिति उलटी हो गई। 1572 में

'सेंट बार्थलोमोवज् डे' पर हजारों प्रोटेस्टेंट पुरुषों, औरतों और बच्चों की नृशंस हत्या कर दी गई। यह जनसंहार तुरंत प्रांतों में फैल गया और अनेक सप्ताहों तक चलता रहा। इसने ईसाइयत के दो धड़ों के बीच जबरदस्त घृणा पैदा कर दी। 'सेंट बार्थलोमोवज् डे' एक महत्वपूर्ण घटना थी। 1789 की फ्रांस की क्रांति के पहले तक यह फ्रांस की सबसे रक्तरंजित घटना थी। इस नरसंहार से धार्मिक युद्ध लंबा खिंच गया। ह्युनॉट्स ने अपने रिश्तेदारों और साथियों की हत्या का बदला लेना चाहा। वे एक ऐसे राजा के प्रतिरोध के सिद्धांत का विकास करने लगे जिसकी कार्रवाइयां ईश्वर के आदेशों के खिलाफ थीं। केल्विन के विचारों से प्रेरणा लेकर ह्युनाट्स लेखक अत्याचारी राजा के खिलाफ विद्रोह को उचित ठहराने लगे जिसने उनके धर्म पर मुकदमा चलाया। लैंग्वेट ने 1579 में अपनी पुस्तक *डिफेंस ऑफ लिबर्टी अगेंस्ट टिरैंट्स* में ह्युनाट्स विद्रोह को उचित ठहराया। नरसंहार के परिणामस्वरूप कुछ कैथोलिक कुलीन भी राजदरबार से अलग हो गए। अंजो के ड्यूक ने दोनों धड़ों के बीच समझौता करना चाहा। जो कैथोलिक संधि चाहते थे, *पोलिटिकेज* कहलाए। हेनरी द्वारा प्रोटेस्टेंट धर्म का त्याग करके रोमन कैथोलिक धारण करने के बाद इसी गुट के नवारे के प्रोटेस्टेंट हेनरी को उत्तराधिकार के अधिकार द्वारा नया राजा बनवाया। 1598 में उसने अपना मशहूर आदेश 'इडिक्ट ऑफ नांत' जारी किया ताकि फ्रांस में धार्मिक झगड़े का अंत किया जा सके और धार्मिक विभाजन पर काबू कर राष्ट्रीय एकता लाई ज़ा सके। प्रोटेस्टेंट अल्पसंख्यकों को सीमित सहिष्णुता दी गई। यह किसी भी यूरोपीय राज्य का पहला दस्तावेज था जिसमें एक सीमा तक धार्मिक सहिष्णुता प्रदान करने की कोशिश की गई थी। इससे करीब एक शताब्दी तक धार्मिक शांति बनी रही। 1685 में इस आदेश को रद्द कर दिया गया।

फ्रांसीसी धार्मिक युद्धों की वास्तविक थी—विरासत सत्रहवीं सदी के दौरान लुई बारहवां और लुई चौदहवां के अधीन निरंकुश राजतंत्र का उदय होना। सम्राट ने नई संस्थाओं के जरिए सत्ता के केंद्रीकरण अथवा मौजूद संस्थाओं के पुनर्गठन के द्वारा फ्रांस में धार्मिक युद्धों से उत्पन्न अव्यवस्था और उथल-पुथल के स्थान पर शांति स्थापित करने का प्रयास किया।

स्कॉटलैंड

स्कॉटलैंड में केल्विनवाद थोड़े ही समय में लोकप्रिय हो गया। यहां पैट्रिक हैमिल्टन ने प्रोटेस्टेंटवाद की भूमि तैयार की। वह एक कुलीन व्यक्ति थे। उन्होंने भिन्न-भिन्न विश्वविद्यालयों में पढ़ाई की थी। ईसाई धर्माधिपति चार्ल्स बीटन के आदेश पर उन्हें बेदी पर जिंदा जला दिया गया था। फिर भी सुधारों की मांग को दबाया नहीं जा सका। एक अन्य प्रोटेस्टेंट प्रचारक जार्ज बिशार्ट ने पूरे स्कॉटलैंड की यात्रा की और कुछ महत्वपूर्ण जमींदारों को

प्रभावित किया। जॉन नाक्स (1505–1572) स्कॉट धर्मसुधार आंदोलन के सबसे प्रभावशाली नेता बन गए। नाक्स ने जेनोआ में अध्ययन किया था और वह केल्विन के विचारों से बहुत प्रभावित थे। उनकी गतिविधियां इंगलैंड के राजा ईडवार्ड षष्ठम के दरबार तक फैल गईं। वह अपधर्मी शासकों के प्रतिरोध के मामलों में केल्विन से भी आगे निकल गए। वह लोकप्रिय प्रोटेस्टेंट उपदेशक बन गए और उन्होंने रोम के खिलाफ लोगों की भावनाओं को जगाया। इंगलैंड में उन्होंने *42 आर्टिकल्स ऑफ रिलिजन* और *सेकंड प्रेयर बुक* तैयार करने में क्रैमर की मदद की। स्कॉट धर्म केल्विनवाद के बहुत समान था और यह *प्रेस्बिटेरियन* कहलाया। उनके प्रवचनों ने लॉर्ड्स ऑफ दि कांग्रिगेशन—विद्रोही प्रोटेस्टेंट कुलीन वर्ग को प्रेरित किया। जॉन नॉक्स ने इसमें निर्णायक भूमिका अदा की। वह प्रोटेस्टेंट कुलीन वर्ग को विद्रोह करने के लिए भड़काकर स्कॉटलैंड के धर्मसुधार आंदोलन के क्रांतिकारी नेता बन गए।

नीदरलैंड्स

नीदरलैंड्स में केल्विनवाद फ्रेंच बोलने वाली आबादी के माध्यम से 1550 के दशक में पहुंचा। सामंतों और स्पेन के शासकों—चार्ल्स पंचम और फिलिप द्वितीय की शासकीय निरंकुशता के बीच संघर्ष, जिन शहरों का वाणिज्यिक और सामुद्रिक गतिविधियों के साथ गहरा संबंध था उनमें मध्य वर्ग का तेजी से उदय, पूंजीवाद का उदीयमान लहर के विरुद्ध अपने पारंपरिक विशेषाधिकारों को बरकरार रखने के व्यापार संघों के प्रयास—ये सभी स्पैनिश साम्राज्यिक शासन के विरुद्ध स्वतंत्रता संघर्ष में मिल गए। स्पैनिश शाही शासन लोगों पर कैथोलिक धर्म थोपना चाहता था। जर्मनी के लूथर के विचारों संबंधी केंद्रों से डच शहरों की निकटता और वाणिज्यिक और राजनीतिक संबंधों के कारण लोग पहले से प्रोटेस्टेंट विचारों को स्वीकार करने लगे थे। अपधर्म संबंधी कानूनों के कार्यान्वयन और अल्वा के ड्यूक के माध्यम से दमन की नीति के परिणामस्वरूप विलियम ऑफ औरेंज के नेतृत्व में प्रतिरोध शुरू हो गया। विलियम नीदरलैंड्स के कुलीन वर्ग से थे। वह एक शक्तिशाली नेता और राजनीतिज्ञ थे। वह जानता थे कि अनेक प्रोटेस्टेंट और कैथोलिक समूह मौजूद हैं। नीदरलैंड्स पर स्पैनिश तानाशाही के खिलाफ लड़ते हुए उन्होंने धार्मिक सहिष्णुता और राजनीतिक स्वतंत्रता के प्रश्नों को उठाया। इसके लिए उन्होंने स्पेन के शत्रुओं से राजनयिक सैन्य सहायता ली। इनमें जर्मनी और इंगलैंड शामिल थे। इस प्रकार क्रांतिकारी केल्विनवादी विचारधारा द्वारा राष्ट्रभक्ति की भावना जागृत की गई। इसके परिणामस्वरूप नीदरलैंड्स में केल्विनिस्ट चर्च की स्थापना हुई। केल्विनवाद का उदय, खास तौर पर एम्स्टर्डम, रॉटरडम और लीडेन के नागरिकों के बीच इसके उदय के कारण पश्चिम के कैथोलिक प्रांतों और यूनाइटेड प्रोविंसेज के बीच विभाजन हो गया।

केल्विनवाद मध्य और पश्चिमी यूरोप में भी फैल गया। अनेक जर्मन राज्यों में लूथर के समर्थकों और कैथोलिकों दोनों ने केल्विनवाद का विरोध किया। पैलेटाइन के निर्वाचक फ्रेडरिक तृतीय जर्मनी में 1563 में केल्विनवाद में धर्मांतरित हो गए। यह केल्विनवादियों के लिए बहुत बड़ी उपलब्धि थी। इससे जर्मन रिफोर्म्ड चर्च की स्थापना हो सकी। केल्विनवाद पोलैंड, लिथुआनिया, हंगरी और बोहेमिया के कुलीनों में भी लोकप्रिय हो गया। हंगरी का डेब्रिसेन नगर 'दि केल्विनिस्ट रोम' कहा जाने लगा। ट्रांसिलवानिया और डची ऑफ सिएस्जिन जैसे क्षेत्रों में भी इसकी उपस्थिति टिकाऊ साबित हुई। यह इंगलिश शुद्धतावादियों, डच रिफोर्म्ड चर्च और स्कॉट प्रेसबिटेरियंस के माध्यम से उत्तरी अमरीका के कुछ क्षेत्रों में भी फैल गया। इसने कांग्रिगेशनलिस्ट्स, प्रेसबिटेरियंस और वैबपतिस्त जैसे संगठनों के निर्माण में सहायता की।

इंगलैंड में धर्मसुधार आंदोलन

इंगलैंड में धर्मसुधार आंदोलन का आगमन दो स्तरों पर देखा जा सकता है और यह एक जटिल प्रक्रिया थी। एक दृष्टिकोण कहता है कि यह ऊपर से आया और हेनरी अष्टम की कार्रवाई के आरंभ से लेकर जानबूझकर की गई सरकारी कार्रवाई द्वारा मध्य से लागू किया गया (जी.आर. एल्टन, पीटर क्लार्क, आदि)। दूसरा विश्लेषण कहता है कि धर्मसुधार आंदोलन की जड़ें धार्मिक थीं न कि राजनीतिक। यह नीचे से शुरू हुआ (ए.जी. डिकेंस, क्लेयर क्रॉस)। इन लेखकों ने वाइक्लिफ के समय में अंतिम लौलाड्र्स और आरंभिक प्रोटेस्टेंटवाद के बीच संबंध स्थापित किए। इसी परिवेश ने जनसाधारण स्तर पर प्रोटेस्टेंट आंदोलन के तेजी से प्रसार में मदद की।

इंगलैंड के धर्मसुधार आंदोलन की शुरुआत मध्य युग में देखी जा सकती है। जॉन वाइक्लिफ के अनुयायी जो लौलाड्र्स कहलाते थे, ने धार्मिक आंदोलन और सामाजिक विरोध आरंभ किया। उन्होंने तत्वांतरण के सिद्धांत (पादरियों द्वारा शराब और ब्रेड को ईसा के मांस और रक्त में बदलने का चमत्कार) का अंधविश्वास कहकर विरोध किया। वाइक्लिफ के समय से इंगलैंड में अपधर्म और पुरोहितवाद विरोध की परंपरा विकसित हुई। ईसाई मानववाद (कालेट, लिनाकेयर, ग्रोसिन, फिशर, आदि द्वारा) के प्रसार से अकादमिक आलोचना का वातावरण बन गया। ड्यूडल ने जेल में लिखी और दबा कर रखी अपनी पुस्तक *दि ट्री ऑफ कॉमनवेल्थ* में धार्मिक सुधारों का सुझाव दिया। थॉमस मोर मशहूर मानववादी इरेस्मस के गहरे मित्र थे। उन्होंने इसी अवधि में अपनी प्रख्यात पुस्तक 'यूटोपिया' की रचना की। स्टीफेन गार्डिनर और इडवार्ड फॉक्स ने इंगलिश चर्च में बढ़ते धार्मिक मतभेद और संभावित खतरे के प्रति पोप क्लिमेंट सप्तम को चेतावनी दी थी। लेकिन पोपतंत्र के अधिकारियों ने इसे नजरअंदाज कर दिया। प्रोटेस्टेंट विचार छापेखाने, यात्रियों

और व्यापारियों के जरिए तटीय शहरों में पहुंचे। ट्यूडर शासन की स्थापना से केंद्रीकरण और निरंकुशता की प्रक्रिया शुरू हो गई जिसमें निरपेक्ष व्यक्तियों ने अहम भूमिका अदा की। सोलहवीं सदी के आरंभिक पचीस वर्षों में प्रोटेस्टेंट विचारों का कितना प्रसार हुआ, यह कहना कठिन है लेकिन इन सभी तत्वों से धर्मसुधार युग के निर्माण में सहायता मिली।

यह भी कहा जाता है कि इंगलैंड में धर्मसुधार का चरित्र राजनीतिक था क्योंकि यह ऊपर से थोपा गया था। हर नए शासक के साथ इसकी किस्मत बदलती गई। इस आंदोलन की शुरुआत किसी धर्मसुधारक द्वारा नहीं बल्कि स्वयं राजा द्वारा संसद के समर्थन से की गई थी। यह विडंबना ही है कि इंगलैंड में धर्मसुधार आंदोलन की शुरुआत उसी शासक—हेनरी अष्टम (1509–47) द्वारा की गई जो मार्टिन लूथर के सुधारों के जबरदस्त आलोचक थे। उनकी पुस्तक *डिफेंस ऑफ सेवेन सैक्रेमेंट्स* के कारण पोप लियो दशम ने उन्हें 'धर्म के रक्षक' (डिफेंडर ऑफ दि फेथ) की उपाधि दी। हेनरी अष्टम अपनी पत्नी कैथरीन को तलाक देना चाहते थे। कथरीन स्पेन की राजकुमारी थी। लेकिन पोप इसकी अनुमति नहीं दे सकता था क्योंकि स्पेन के सम्राट के सैनिक रोम नगर के नियंत्रण में थे। तीन वर्षों तक इंतजार करने के बाद हेनरी अधीर हो गए। उन्होंने मामला अपने हाथों में लेने का निर्णय किया। एक चापलूस संसद (जिसे धर्मसुधार संसद भी कहा जाता था, जिसका कार्यकाल 1529 से 1534 तक था) के माध्यम से उन्होंने पोप के साथ सारे संबंध तोड़ लिए। थामस क्रामवेल के मार्गदर्शन में संसद ने चर्च की उन सभी बुराइयों को चुनकर निकाल दिया जो अलोकप्रिय थे जैसे दफन-संबंधी और उत्तराधिकार शुल्क, बहुलवाद और अनुपस्थिति और लोगों से प्रार्थना करने के बदले दान लेने की शक्ति आदि। एक्ट ऑफ एनेट्स द्वारा इंगलैंड के चर्च को अपनी आय का कोई भी भाग पोप को भेजने से मना कर दिया गया। (पहले एक वर्ष की आय अथवा पहला फल पोप को भेजना पड़ता था।) एक्ट ऑफ अपील ने इंगलिश चर्च को पोप के न्यायालयों के न्यायाधिकार क्षेत्र के बाहर कर दिया। 1534 में संसद के अनुमोदन से हेनरी अष्टम को इंगलैंड के चर्च का प्रधान घोषित किया गया। फिर भी, जैसा कि ए.जी. डिकेंस ने कहा है कि यह ध्यान देने वाली बात है कि तलाक के मुकदमे ने न तो प्रोटेस्टेंटवाद न ही पोपविरोधी शक्तियों का निर्माण किया जिसने धर्मसुधार का मार्ग सहज बना दिया था। इस प्रकार की शक्तियां इंगलैंड के समाज में बिलकुल अलग-अलग और गहरी पैठ की हुई थीं। 1530 के दशक तक ये शक्तियां विस्फोट की नाजुक स्थिति में पहुंच गईं। 1536 और 1539 में सभी मठों को समाप्त कर दिया गया और उनकी संपत्ति जब्त कर ली गई। यह अनुमान लगाया जाता है कि जब्त की गई संपत्ति मोटे तौर पर राज्य की वार्षिक आय की तीन गुनी थी। यह संपत्ति उनके वफादार समर्थकों में बांट या बेच दी गई। ये लोग छोटे जमींदार या भूमि पर आश्रित छोटे किसान थे। इस प्रकार हेनरी ने संसद और जनसाधारण को शामिल करके धर्मसुधार आंदोलन को एक राष्ट्रीय आंदोलन में बदल दिया।

हेनरी का धर्मसुधार व्यक्तिगत कारणों से एक राजनीतिक कार्रवाई के रूप में शुरू हुआ। वह किसी भी रूप में प्रोटेस्टेंट नहीं थे। उनके 'सिक्स आर्टिकल्स ऑफ रिलिजन' में सभी कैथोलिक सिद्धांत और प्रथाएं रखी गईं लेकिन पोप की सर्वोच्चता समाप्त कर दी गई। प्रोटेस्टेंट हों या कैथोलिक, हेनरी की सर्वोच्चता को अस्वीकार करने वाले को कठोर यातना दी जाती थी। प्रख्यात मानववादी थामस मोर को इसी वजह से फांसी दे दी गई।

हेनरी के एकमात्र बेटे ऐडवर्ड षष्ठम (1547–53) के संक्षिप्त शासनकाल के दौरान प्रोटेस्टेंटवाद ने आश्चर्यजनक प्रगति की। जब प्रोटेस्टेंट आर्कबिशप क्रैनमर ने *बुक ऑफ कॉमन प्रेयर* लिखी और एक्ट ऑफ यूनिफार्मिटी के जरिए *फोर्टी-टू आर्टिकल्स ऑफ फेथ* (धर्म के बयालिस सूत्र) थोप दिया तो इंगलैंड का चर्च करीब-करीब केल्विनवादी हो गया। उग्र प्रोटेस्टेंटवाद के समर्थक प्युरिटंस कहलाए। ये धर्मसुधार की शिक्षा के विशुद्ध संस्करण में विश्वास करते थे। धीरे-धीरे इनकी संख्या काफी बढ़ गई। इंगलैंड में प्रोटेस्टेंट धर्मसुधार आंदोलन को मैरी ट्यूडर (1553–58) के शासनकाल के दौरान बड़ा धक्का लगा। वह हेनरी अष्टम और कैथरीन की बेटी थी। उसने कैथोलिक धर्म को पुनर्स्थापित कर दिया। अपनी प्रजा के लिए पोपतंत्र से क्षमा मांगी और आर्कबिशप क्रैनमर सहित सैकड़ों प्रोटेस्टेंट अनुयायियों को जिंदा जला देने का आदेश दिया। उसका यह अत्याचार काफी अलोकप्रिय हो गया और इससे रोमन कैथालिक धर्म के प्रयोजन को भी क्षति पहुंची।

एलिजाबेथ (1558–1603) का शासनकाल इंगलैंड में धार्मिक युद्ध के खतरे से आरंभ हुआ। स्पेन के आक्रमण और पोप के डर से राष्ट्रीय अस्मिता की भावना बढ़ गई। एलिजाबेथ के धार्मिक समझौते से इंगलैंड में एंगलिकन चर्च की स्थापना हुई। यह मध्यमार्ग था जो कि रूढ़िवादी प्रोटेस्टेंटवाद के निकट था। क्रैनमर की पुस्तक *बुक ऑफ कॉमन प्रेयर* को थोड़े संशोधन के साथ पुन: अपनाया गया। धर्म के बयालिस सूत्रों के स्थान पर उंचालिस सूत्र अपनाए गए। विवादास्पद सैद्धांतिक बिंदुओं को हटा दिया गया। पादरी वर्ग के ब्रह्मचर्य को अस्वीकार कर दिया गया। बपतिस्मा और यूखारिस्त, दो परमसंस्कारों को रखा गया और धर्माध्यक्षीय (इपिस्कोपल) व्यवस्था (बिशपों द्वारा चर्च का शासन) अपनाई गई। चर्च में उपस्थिति को अनिवार्य बना दिया गया। मत विरोधियों पर बहुत अधिक जुर्माना किया जाता था। इंगलिश प्रोटेस्टेंटवाद का वास्तविक स्वरूप विवाद का विषय बन गया। एलिजाबेथ के समझौते का विश्लेषण उनके शासनकाल के अंत में रिचर्ड हूकर द्वारा अपनी पुस्तक *लॉज ऑफ एक्लेजिएस्टिकल पोलिटी* में किया गया था। एलिजाबेथ का चर्च मध्यमार्ग को दरशाता था। इसमें इंगलैंड की परंपराओं का समायोजन किया गया था। इंगलैंड के अधिकांश लोगों ने एंगलिकन समझौते को स्वीकार कर लिया। लेकिन प्युरिटंस और रोमन कैथोलिक मतावलंबी इसका विरोध करते रहे। कैथोलिकों ने अपनी प्रतिष्ठा खो दी क्योंकि उन्होंने विदेशी सहयोग से सैन्य विद्रोह और षड्यंत्र कराने के प्रयास किए। प्युरिटंस अनिवार्य रूप से केल्विनवादी थे। ये प्रोटेस्टेंट्स के गरम दल से जुड़े थे। इनकी

संख्या बहुत बड़ी नहीं थी लेकिन इन्होंने इंगलैंड की राजनीति में, खास तौर पर स्टुअर्ट राजाओं के शासनकाल में महत्वपूर्ण भूमिका अदा की थी। जैसा कि इंगलैंड में धर्मसुधार राजनीतिक साधनों के जरिए किया गया, इसलिए प्युरिटंस ने सरकार और लोगों की सोच को प्रभावित करने के लिए संसद को एक राजनीतिक मंच के रूप में इस्तेमाल करते हुए सम्राट और एंगलिकन चर्च पर हमला किया। जेम्स प्रथम (1603–25) के शासनकाल के दौरान उनका विरोध तीव्र हो गया और चार्ल्स प्रथम (1625–49) के समय में परमसत्तावाद की सैद्धांतिक व्याख्या द्वारा इस विरोध को और मजबूती दी गई। कई अलग-अलग शिकायतों और मतभेदों के साथ-साथ धर्म भी एक महत्वपूर्ण मसला बन गया और यह इंगलैंड के गृहयुद्ध (1642–49) का एक कारण बन गया।

धर्मसुधार आंदोलन ने इंगलिश राजतंत्र को सुदृढ़ करने और एक राष्ट्रीय चर्च के निर्माण में सहायता की। जैसा कि क्रिस्टोफर हिल ने कहा है कि धर्मसुधार आंदोलन ने न केवल राष्ट्रीय चर्च को राजा के अधीन ला दिया बल्कि पैरिशेज को स्क्वायर्स के अधीन बना दिया। ट्यूडर शासकों के अधीन 'काउंसिल ऑफ नॉर्थ' (धार्मिक विद्रोहों को दबाने के लिए),काउंसिल ऑफ वेल्स, कोर्ट ऑफ हाई कमीशन की स्थापना से राजाओं के परमाधिकार बढ़े। परिणामस्वरूप 1540 में नए न्यायालयों की स्थापना हुई। नए भू-राजस्व के नियंत्रण के लिए कोर्ट ऑफ आगमेंटेशन बना। कोर्ट ऑफ वार्ड को नई शक्ल दी गई। राजा के उत्तराधिकार, या राज्य के धर्म के निर्धारण जैसे महत्वपूर्ण विषयों के हल के लिए निरंतर चलने वाले सत्रों के कारण संसद का भी महत्व, अनुभव और संगठन बढ़ा। हाऊस ऑफ कॉमंस में सदन की दैनिक कार्यवाही को लिखने और जर्नल तैयार करने की परंपरा शुरू हुई। इंगलैंड में धर्मसुधार आंदोलन से इसकी संरचना में भी बदलाव आए। संसद में मठाधीशों (एबॉट्स) जैसे धार्मिक सदस्यों का प्रभाव और इनकी संख्या तेजी से घटी और अयाजकीय तत्वों का प्रभाव बढ़ा। ऐसा लगता है कि हेनरी अष्टम के धर्मसुधार के बाद भू-अंतरणों की प्रक्रिया में तेजी आई। इसके परिणामस्वरूप एक नए जमींदार वर्ग का उदय हुआ या इसका फायदा आभिजात्य वर्ग को मिला, यह विवाद का विषय माना जाता है। धर्मसुधार आंदोलन ने गरीबों की सहायता की नई समस्याएं खड़ी कर दीं। पहले चर्च गरीबों को दया-दान से मदद करता था। सरकार ने इस समस्या से निपटने के लिए अनेक 'पुअर लॉज' (गरीबों के लिए कानून) पारित किए जिन्हें लोगों ने बड़ा ही कठोर पाया। वहीं, मठों और मिस्सा के लिए दान की प्रथा को समाप्त किए जाने से एक राष्ट्रीय शिक्षा प्रणाली की स्थापना का अवसर मिला। इससे समाज के विभिन्न वर्गों में परस्पर मेल-मिलाप बढ़ा।

इंगलैंड में धर्मसुधार आंदोलन ने एक सुस्पष्ट प्रोटेस्टेंट साहित्यिक परंपरा का निर्माण किया। यह ऐडवर्ड षष्ठम के शासनकाल के दौरान और भी स्पष्ट हो गया। विलियम टाइंडेल, साइमन फिश, जॉन बेल प्रोटेस्टेंट विद्वानों की पहली पीढ़ी में थे। लेकिन प्रोटेस्टेंट विचारों का प्रभाव ऐडमंड स्पेंसर, डन, हर्बर्ट और जॉन मिल्टन जैसे लेखकों के लेखों में

स्पष्ट रूप से देखा जा सकता है। धार्मिक शहीदों का एक मर्मस्पर्शी चित्रण जॉन फॉक्स की पुस्तक *बुक ऑफ मार्टर्स* में देखा जा सकता है। इसी प्रकार इंगलिश चर्च की प्रतिष्ठा एलिजाबेथ काल में अपने चरम बिंदु पर पहुंच गई। विलियम बायर्ड, थाम टैलिस, थामस वील्कस और ओरलैंडों गिबंस के भजन और उनकी सेवाओं के विवरण कई कैथेड्रल्स और कोरस गीतों में मिलते हैं।

अतः हम कह सकते हैं कि इंगलैंड का धर्मसुधार आंदोलन अन्य देशों के धर्मसुधार से बिलकुल अलग था। यहां शासकों ने व्यक्तिगत कारणों से पहल की। इसका कार्यान्वयन राजनीतिक साधनों के जरिए किया गया। फिर भी राज्य द्वारा अवपीड़न बाइबिल की पुस्तकों के बिना सफल नहीं हो सकता था। अग्रणी लौलार्ड ईसाई मत के प्रचारकों ने प्रोटेस्टेंट विचारों को स्वीकार्य बनाने के लिए आधार तैयार किया था। एंगलिकन चर्च सेट्लमेंट (1559) अतिवादों से बचने, प्रोटेस्टेंटवाद और कैथोलिकवाद के बीच मध्यमार्ग अपनाने और एक राष्ट्रीय चर्च की स्थापना करने का एक प्रयास था।

बोहेमिया

सोलहवीं सदी के दौरान बोहेमिया में प्रोटेस्टेंट आंदोलन को व्यापक सफलता मिली। जैसा कि पहले उल्लेख किया गया कि यह जॉन हस के आमूल परिवर्तनकारी सुधारों का केंद्र था जिसने बोहेमिया की धार्मिक स्थिति बदल दी। इसने इस क्षेत्र को अलग-थलग कर दिया। बोहेमिया की एक बड़ी आबादी को हसाइट अल्ट्राक्विस्ट चर्च में भरती कर लिया गया था। इसका प्रशासनिक और धर्मसैद्धांतिक तंत्र रोम से स्वतंत्र था। कुलीन वर्ग के धर्मनिरपेक्ष जागीर और नगर इसे प्रभावी रूप में निर्देश देते थे। दूसरा मतविरोधी समूह शक्तिशाली कुलीनों का एक स्वैच्छिक संघ था—बोहेमिया ब्रेदरेन का संघ। वे हसाइट आंदोलन के वामपंथी थे। वे पुरोहिताई को अस्वीकार और बाइबिल पर आधारित ईसाइयत को समर्थन करते थे। धार्मिक विविधता की इसी जटिल पृष्ठभूमि में लूथर का जर्मन धर्मसुधार का प्रवेश हुआ। प्राग में जन पोडुस्को और वाक्लार रोज्द जैसे आध्यात्मिक नेताओं ने लूथर के कार्यों का समर्थन किया। आरंभ में लूथर ने भी बोहेमियंस के प्रति उत्साह दिखाया। उन्होंने अल्ट्राक्वाइस्ट्स से संपर्क किया लेकिन धर्मसैद्धांतिक मतभेद के कारण बाद में यूनियन ऑफ ब्रेदरेन से सहयोग मांगा। लूथर का प्रभाव मुख्य रूप से जर्मन भाषी कैथोलिक आबादी में था। फिर भी व्यक्तिगत सामंतों के अधीन भी अलग-अलग कई सुधार हुए। इसी कारण अनेक उग्र समूह यहां आकर बस गए। इसके फलस्वरूप यहां गंभीर धार्मिक झगड़े शुरू हो गए जिसकी परिणति गृहयुद्ध के रूप में हुई। 1547 में धर्मसुधार द्वारा राजनीतिक रूप से प्रेरित जागीर विद्रोह 1618–20 में हुए बड़े विद्रोह का पूर्वाभ्यास था। इसकी पराकाष्ठा तीस वर्षीय युद्ध थी।

रैडिकल धर्मसुधार आंदोलन

प्रोटेस्टेंट धर्मसुधार आंदोलन का यूरोप के अलग-अलग भागों में राज्य के साथ अलग-अलग संबंध था। इसके अलावा धार्मिक संप्रदायों से अलग हुए अनेक समूहों का उदय हुआ जो आमूल परिवर्तनकारी सुधारों की वकालत कर रहे थे जैसे—एनाबैपतिस्त्स, स्पिरिच्वलिस्ट्स, एंटीट्रिनिटैरियंस और अन्य धार्मिक समूह। ये प्रोटेस्टेंट्स के 'रैडिकल ग्रुप्स' का प्रतिनिधित्व करते थे। एक प्रामाणिक प्रोटेस्टेंट चर्च की स्थापना में सबसे बड़ा खतरा 'एनाबैपतिस्त्स' से था। यह उनकी साख बिगाड़ने के लिए एक अपमानजनक शब्द था।

एनाबैपतिस्त्स ने शिशु बपतिस्मा के सिद्धांत को अस्वीकार कर दिया। उनका मानना था कि सच्चा ईसाई वह है जिसका वयस्क के रूप में दोबारा बपतिस्मा किया गया हो। वे आस्था द्वारा दोषमोचन में विश्वास करते थे। उनका तर्क था कि केवल वही चर्च के सच्चे सदस्य बन सकते थे जिनका ईश्वर में अटूट विश्वास हो। बाकी सब को वे इससे बाहर रखते थे। जैसा कि प्रोटेस्टेंट और कैथोलिक धर्मावलंबी दोनों शिशु बपतिस्मा को एक परमसंस्कार मानते थे, एनाबैपतिस्त्स के तर्कों ने उनके सिद्धांत के लिए खतरा पैदा कर दिए। दरअसल लूथर, केल्विन और ज्विंगली सभी मानते थे कि शिशु बपतिस्मा की उत्पत्ति बाइबिल से हुई है और जिन बच्चों का बपतिस्मा नहीं हुआ है उनकी मृत्यु पर उन्हें स्वर्ग में स्वीकार नहीं किया जाएगा। जिस समय बच्चों की बड़ी संख्या में मृत्यु हो रही थी उस समय उन विचारों की बड़ी प्रासंगिकता थी। इसके अलावा एनाबैपतिस्त्स सदस्यों ने नागरिक सरकार को मान्यता देने या इसमें भाग लेने या उसकी आज्ञा मानने, शपथ लेने या सेना में सेवा भरती होने या सरकार के करों का भुगतान करने से मना कर दिया। उनका तर्क था कि सच्चे ईसाइयों को कभी भी तलवार नहीं उठानी चाहिए न ही न्यायालय में जाना चाहिए और न ही दंडाधिकारीय कार्य करना चाहिए। यह समूह गरीब लोगों की आकांक्षाओं को प्रतिबिंबित करता था। यह ईसा के दोबारा आगमन के लिए सभी संस्थाओं का सामाजिक सुधार करना चाहता था। कुछ एनाबैपतिस्त्स वस्तुओं की सामुदायिकता का तर्क देते थे। वे निजी संपत्ति को एक सामाजिक बुराई समझते थे। उनमें से कई ओल्ड टेस्टामेंट (पुरातन विधान) से उद्धरणों को शब्दश: प्रस्तुत कर बहुविवाह और स्वच्छंद संभोग की सिफारिश करते थे। वे सांझी अर्थव्यवस्था को अपनाते थे। थॉमस मुंत्जर और जॉन ऑफ लेडन जैसे सशक्त कर्मियों ने 1534 में उत्तर पश्चिमी जर्मनी के मंस्टर में हिंसक तानाशाही स्थापित की। उनके अनुयायियों ने उनमें विश्वास नहीं रखने वालों की संपत्ति जब्त कर ली और बाइबिल को छोड़कर सभी पुस्तकें जला दीं। कॉनरैंड ग्रिवेल ज्यूरिक के एक उच्च वर्गीय परिवार का मानववादी थे और फिर भी वह एनाबैपतिस्त थे। एनाबैपतिस्तों के सबसे प्रभावशाली और सफल नेता एक डच पादरी, मेनो साइमंस थे। उनके अनुयायियों ने खुद को मनोनाइट्स के रूप में संगठित किया। लूथर, केल्विन और अन्य प्रोटेस्टेंट, साथ ही कैथोलिक सुधारक एनाबैपतिस्तों के सामाजिक सिद्धांतों की कटु भर्त्सना करते थे।

एनाबैपतिस्त्स जहां कहीं भी जाकर बसते, स्थानीय शासक उन्हें उत्पीड़ित करते, प्रोटेस्टेंट्स उन्हें पानी में डुबोते और उन पर पत्थर मारने का आदेश देते। वहीं कैथोलिक उन्हें जिंदा जला देते। अपनी तमाम कठिनाइयों और उत्पीड़नों के बावजूद कई एनाबैपतिस्त्स जर्मनी, स्विस शहरों या बोहेमिया, हंगरी और पोलैंड में समूहों में बस गए। बाल्थसर हबमेयर और जेकब हटर जैसे कुछ प्रमुख नेताओं ने कुछ कुलीनों को अपने मत में शामिल कर लिया था, परंतु उन्हें भी उत्पीड़न और मौत का सामना करना पड़ा। इंगलैंड और पूरे उत्तरी-पश्चिमी यूरोप में कुछ स्वतंत्र समूह मुकदमों से बच निकले। इंगलैंड में सत्रहवीं शताब्दी में गृह-युद्ध के दौरान उन्होंने फिर अपने सिर उठाए और वे असफल रहे। फिर भी उन्होंने अपने पीछे लोकतांत्रिक विचारणा और आर्थिक समानता की परंपरा छोड़ी। एनाबैपतिस्त परंपरा में एक और समूह सोसाइटी ऑफ फ्रेंड्स था। सत्रहवीं सदी में इंगलैंड में जार्ज फॉक्स द्वारा इसकी स्थापना की गई थी। वे सामूहिक रूप से क्वेकर्स कहलाते थे। वे ऐसे ईसाई थे जो पादरियों के बिना अनौपचारिक बैठकें करते थे। वे पूरे पश्चिमी यूरोप में और बाद में संयुक्त राज्य अमरीका में सक्रिय रहे।

कैथोलिक धर्मसुधार आंदोलन

कैथोलिक चर्च को अपने संस्थागत पतन और भ्रष्टाचार के कारण हमेशा आलोचना का सामना करना पड़ रहा था और इसके अधिकारी यह सहन नहीं कर पा रहे थे। इन बातों की चर्चा इस अध्याय के आरंभ में ही की जा चुकी है। वाइक्लिफ और हस के साथ अपधर्मी का सा व्यवहार किया जाता था। बारहवीं और तेरहवीं सदियों में वाल्डिनेशियन और एल्बिजेनेशियंस भी नजरअंदाज किए जाते थे। सोलहवीं सदी में जाकर चर्च में अंदरूनी सुधार के गंभीर प्रयास किए गए। सक्षम पादरियों की भारी कमी थी और कई बिशप अपने बिशपक्षेत्र में नहीं रहते थे। वे प्रशासनिक अधिकारी के समान हो गए थे जिनके पास धार्मिक जिम्मेदारियों से अधिक राजनीतिक जिम्मेदारियां थीं। उनमें से कुछ राजकुमारों के चांसलर बन गए थे। जहां पादरी वर्ग विफल हुआ वहां भिक्षुओं ने यह जिम्मेदारी निभाई। वे लोगों के साथ सीधे संपर्क पर जोर देते थे। अधिकांश सुधारकों ने इस पहलू की चर्चा की थी। इस दिशा में *डिवोशियो मॉडर्ना* (आधुनिक भक्ति) द्वारा भी कुछ प्रयास किए गए। इनमें अयाजकों (साधारण जन) ने नेतृत्व संभाला। कुछ पादरी और भिक्षु भी उनके साथ शामिल हो गए। ब्रदरहुड्स ने भी खुद को धर्मपरायणता और पवित्रीकरण में समर्पित कर दिया। 1517 में *दि ओरेटरी ऑफ डिवाइन लव* ने धर्मोपदेश और प्रार्थना, स्वीकारोक्ति आदि के जरिए आत्माओं की शुद्धि पर ध्यान केंद्रित करके नियमित पादरी वर्ग की कमियों को दूर करने का बीड़ा उठाया। चर्च के पतन के बारे में जानकारी आम थी। इसके

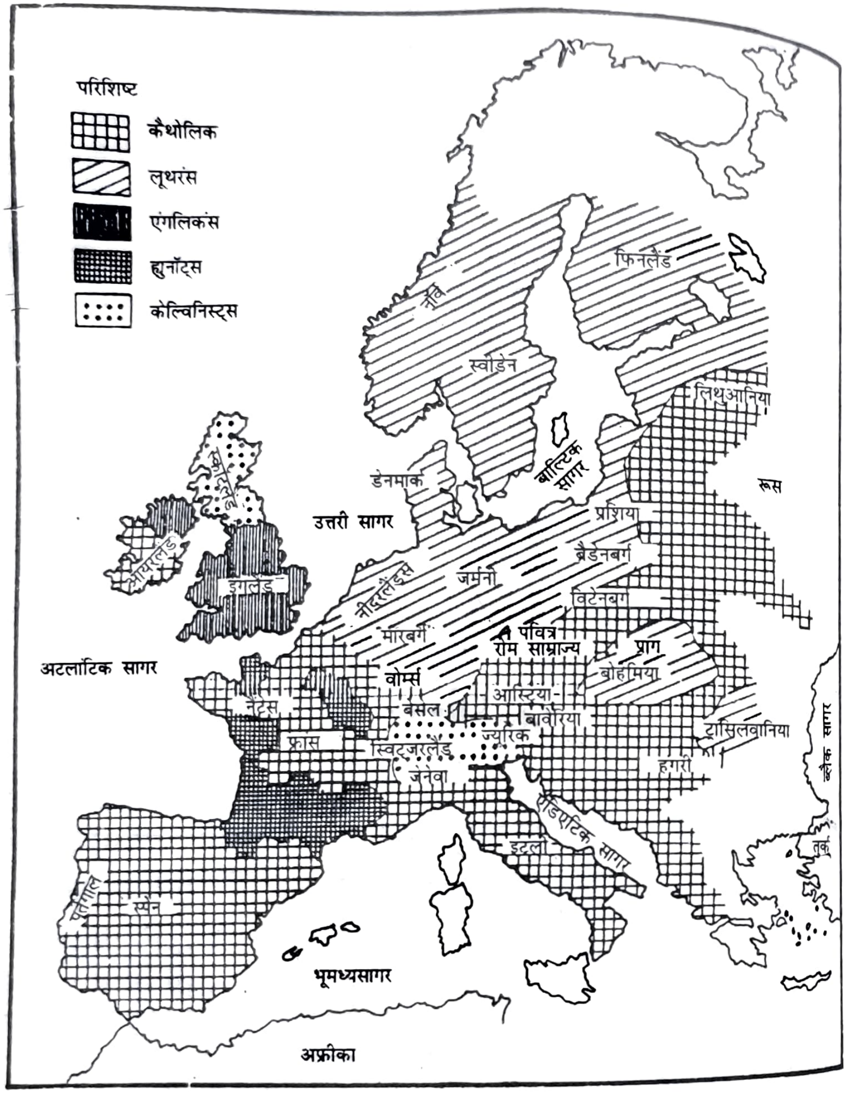

मानचित्र 4.1
धर्मसुधार आंदोलन का प्रसार

फलस्वरूप इसे रोकने के प्रयास प्रोटेस्टेंटवाद के शुरू होने के पहले से ही आरंभ हो गए थे। पंद्रहवीं सदी के अंत में जिमेनाज़ डी सिनेरोज द्वारा स्पैनिश धार्मिक व्यवस्था में व्यापक सुधार लाने का प्रयास किया गया। उन्होंने स्पैनिश इनक्वीजिशन (धार्मिक न्यायालय) के इनक्वीस्टर-जेनरल के रूप में काम किया था। उनके सुधार धर्मपरायणता और मानववाद के मिश्रण थे। उन्होंने पादरीवर्ग को समझाने की कोशिश की कि वे अपने इलाके के लोगों को ईसा के उपदेशों के बारे में बताएं और बच्चों को चर्च के सिद्धांतों की शिक्षा दें। उनके अपने धार्मिक घरानों, खास तौर पर फ्रैंसिस्कन ऑर्डर का सुधार आरंभ करने के लिए कहा गया। उनके सुधारों से स्पेन में प्रोटेस्टेंट हमलों की धार कम हुई और कैथोलिक धर्म प्रोटेस्टेंट पैठ से बचा रहा। कैथोलिक धर्मसुधार करीब-करीब उसी समय आरंभ हुआ जब प्रोटेस्टेंट धर्मसुधार। बाद में प्रोटेस्टेंट चुनौती ने इसकी गति तीव्र कर दी और यह प्रति-धर्मसुधार के रूप में जाना गया।

मध्य और उत्तरी यूरोप में प्रोटेस्टेंट धर्मसुधार की सफलता से 1530 के दशक में ऐसा लगता था कि पूरा यूरोप प्रोटेस्टेंट बन जाएगा परंतु कैथोलिक चर्च अपने विघटन के प्रति सजग हो गया और खुद को सुधारने के लिए तुरंत कार्रवाई की और एक सदी बाद यह तसवीर उलटी हो गई। कैथोलिकवाद ने अपनी उस शक्ति और गतिशीलता का परिचय देते हुए खोए हुए कई प्रदेशों को पुनः जीत लिया जो रूढ़िवादी प्रोटेस्टेंटवाद में नहीं नजर आता था।

ऐसा प्रतीत होता है कि सोलहवीं सदी में कैथोलिक पुनर्जागरण के दो पहलू थे। पहला उन सर्वविदित बुराइयों को दूर करने के लिए आंतरिक सुधारों से संबंधित था जिनके कारण प्रोटेस्टेंट आंदोलन का उदय हुआ। ये आंतरिक सुधार, जिसने आध्यात्मिक पुनर्जागरण या संस्थागत सुधार का रूप लिया, 'कैथोलिक धर्मसुधार' के रूप में जाने गए। दूसरा पहलू उनका युयुत्सु चरित्र दरशाता था। इसके जरिए उन्होंने न केवल खोई हुई जमीन हासिल की बल्कि वे कैथोलिक धर्म को पुनर्जीवित करने में भी सफल हुए। यह पहलू 'प्रति-धर्मसुधार' कहलाया।

सोलहवीं सदी में धार्मिक संस्थाओं और व्यक्ति विशेष की गतिविधियों में आंतरिक पुनर्जीवन के जरिए पुनरुत्थान की प्रक्रिया में तेजी आई। इटली के रोम में *ओरेटरी ऑफ डिवाइन लव* के अलावा *कैपुचिंस द बार्नेबाइट्स* और *उर्सलाइंस* जैसी अनेक नई संस्थाएं थीं। संत इगनैशियस लोयोला (1491-1556) ने स्पेन में नेतृत्व किया। उन्होंने 'सोसाइटी ऑफ जीसस' (1534) के जरिए अपनी गतिविधि चलाई। अधिकांश जेसुइट्स नेता इसी स्थान से उभरे। लोयोला के जोरदार नेतृत्व में कैथोलिक धर्म रूढ़िवाद के मार्ग पर जा रहा था जो कैथोलिक पुनरुत्थान को सशक्त आधार प्रदान करने वाला था। इगनैशियश लोयोला का जन्म एक धनवान कुलीन परिवार में हुआ था। वह फ्रांस के विरुद्ध एक युद्ध में घायल हो गए थे। जख्म से उभरते समय उनमें एक आध्यात्मिक परिवर्तन आया। उन्होंने ईसा

इगनैशियस लोयोला (1491-1556)

संबंधी साहित्य पढ़ना आरंभ किया। वे मानरेसा स्थित एक गुफा में एक वर्ष तक रहे। वहां उन्होंने अपना समय प्रार्थना और गरीबों और रोगियों की देखभाल में बिताया। उन्होंने मुसलमानों को ईसाइयत में धर्मांतरित करने के लिए एक लंबी यात्रा भी की। लेकिन इस मिशन में वह असफल हो गए। फिर भी वह एक सफल धर्मसुधारक साबित हुए।

लोयोला स्पेन के मूल निवासियों के धार्मिक जोश से बहुत प्रभावित थे। रहस्यवादी और मानववादी प्रभावों का भी उन पर असर था। उन्होंने यह धारणा विकसित कर ली थी कि मनुष्य अपनी ज्ञानेंद्रियों से ईश्वर का हर जगह अनुभव कर सकता है। इसी में भोगवाद का आधार है जिसने जेसुइट्स द्वारा कला और स्थापत्य के उपयोग को प्रभावित किया। कला की बरॉक (अत्यलंकृत) शैली काफी उदार थी और इसकी विषयवस्तु का उद्देश्य हृदय को स्पर्श करना था। अपनी रूढ़िवादी सोच के बावजूद लोयोला उनके साथ नहीं गए जो धर्म की एकता और खून की पवित्रता के उद्देश्य से कन्वर्सो (वे धर्म परिवर्तक जिन्होंने दमन से बचने के लिए ईसाई धर्म अपनाया था) से चर्च को पवित्र करना चाहते थे। स्पैनिश धर्माधिकरण भी यही प्रयास करता था। लोयोला इस विचार से सहमत नहीं थे। उनका सुझाव था कि ईश्वर तक पहुंचने के लिए मनुष्य के मन को प्रशिक्षित और अनुशासित करने की आवश्यकता है और यह केवल आध्यात्मिक अभ्यास से संभवा है। ईश्वर की आज्ञा-परायणता के लिए स्वार्थी विचार और इंद्रिय वासनाओं के प्रति आकर्षण को समाप्त करना आवश्यक है। वह महसूस करते थे कि धर्म समुदाय के पक्ष में निजी निर्णय को दरकिनार कर देना चाहिए। उन्होंने सिफारिश की कि प्रत्येक सदस्य को स्पैनिश परंपरा के अनुशासन, रहस्यवाद और आधुनिक भक्ति पर आधारित इन अभ्यासों को वर्ष में चार सप्ताहों तक करना चाहिए।

लोयोला के सुधारों की सबसे बड़ी शक्ति इसकी पद्धतियों में लचीलापन थी जिसने जर्मनी के पीटर कैनिस जैसे चरित्रवान और सामर्थ्यवान लोगों को आकर्षित किया। जेसुइट आर्डर की गतिविधियां दो क्षेत्रों में देखी जा सकती हैं। पहला, वे पापस्वीकरण अधिकारी और राजनयिकों के रूप में शासकों के साथ कार्य करते थे। उनका शासकों पर बहुत प्रभाव था। दूसरा, जेसुइट्स नए विद्यालयों और विश्वविद्यालयों की स्थापना के द्वारा शैक्षणिक सुधारों पर जोर देते थे। इसका उद्देश्य कैथोलिक धर्म के प्रति समर्पित संभ्रांतवर्गीय युवकों को प्रशिक्षित करना और धर्मशास्त्रीय अध्ययनों की प्रतिष्ठा को पुनः स्थापित करना था। जेसुइट्स यूरोप में कुछ उत्कृष्ट प्राथमिक और माध्यमिक विद्यालयों की स्थापना करने में सफल रहे। उन्होंने शिक्षा के सभी पहलुओं का विकास करने का प्रयास किया—खेल-कूद (जिस पर उन दिनों नाक-भौं सिकोड़ा जाता था), नृत्य, नाटक अभिनय आदि। इसका उद्देश्य व्यर्थ नैतिक उपदेश को कैथोलिक सिद्धांतों से समन्वय के साथ मानवीय भावना को और दिशा देना था।

इटली में कई नए संप्रदायों की स्थापना हुई। इनमें सबसे उल्लेखनीय *कैपुचिंस* (नई

व्यवस्था) थे जिनकी स्थापना 1529 में हुई। यह समाज के गरीब वर्ग की दैनिक समस्याओं के महत्व पर जोर देता था। इसका प्रयास चर्च को उन साधारण लोगों के लिए अधिक प्रासंगिक बनाने का था जो खतरों और प्राकृतिक आपदाओं से घिरे थे। कैपुचिंस मानवता और उदारता के गुणों पर बल देते थे, जिनका विकास उपदेश के जरिए किया गया।

सोलहवीं सदी के प्रथम पच्चीस वर्षों में कैथोलिक धर्म में सुधार के प्रयास किए गए लेकिन कुछ खास सफलता नहीं मिली। चार्ल्स पंचम के शिक्षकों (ट्यूटर्स)—हैड्रियन षष्ठम और लियो दशम ने एक छोटी सी शुरुआत की। वर्ष 1527 को पोपतंत्र में सुधार के संबंध में एक प्रतीक चिह्न माना जाता है। सम्राट चार्ल्स पंचम के सैनिकों ने रोम में लूटपाट की, क्योंकि उनके वेतन का भुगतान नहीं किया गया था। इसका रोमन कैथोलिक चर्च पर गहरा मनोवैज्ञानिक असर हुआ। उन्होंने महसूस किया कि संगठन में तुरंत सुधार करने की आवश्यकता है। इस दिशा में पहला कदम पोप पॉल तृतीय द्वारा पोप परिषद के सदस्यों के सुधार आयोग की स्थापना करके उठाया गया। आयोग ने ऊपर से सुधार करने की सिफारिश की। अगला प्रश्न यह था कि सुधार कैसे किया जाए। चर्च ने चर्च परिषद बुलाने का पुराना समाधान बताया। पोप इस प्रकार की परिषदों से डरता था क्योंकि पिछली शताब्दी में कांस्टैंस और बास्ल की परिषद ने पोपतंत्र पर अपनी प्रधानता का दावा किया था। चार्ल्स पंचम ने परिषद का पक्ष लिया। काउंसिल ऑफ ट्रेंट की 1545–47, 1551–52 और 1562–63 में तीन बैठकें बुलाई गईं।

एन.एस. डेविड्सन के अनुसार कैथोलिक काउंसिल ऑफ ट्रेंट की पहली बैठक 1545 में हुई। इसका उद्देश्य प्रोटेस्टेंट अनुयायियों के साथ समझौता करना नहीं था। इसका मुख्य उद्देश्य इटली जैसे क्षेत्रों में कैथोलिकवाद स्थापित करना था जहां प्रोटेस्टेंटवाद अच्छी तरह स्थापित नहीं हो पाया था। इसका सैद्धांतिक उद्देश्य सीधा-सा था। यह उन धारणाओं तक सीमित था जिनका प्रोटेस्टेंट द्वारा खंडन किया गया था जैसे दोषमोचन के बारे में चर्च की शिक्षा। परिषद द्वारा जिन सुधारों की सिफारिश की गई उनमें धन लेकर पाप मुक्ति पर पाबंदी, पादरी वर्ग की शिक्षा पर नए सिरे से ध्यान देना और बिशप के कर्तव्यों और दायित्वों की गहन जांच करना शामिल था। इसने धार्मिक व्यक्तिवाद को स्पष्ट रूप से खारिज कर दिया।

काउंसिल ऑफ ट्रेंट की बैठकों के पहले कैथोलिकों के एक उदार वर्ग ने लूथरन धर्मांतरितों को वापस लाने के लिए (लगभग 1541 तक) एक सैद्धांतिक समझौते पर पहुंचने की कोशिश की। जब ये प्रयास विफल हो गए तो अवपीड़न अपनाया गया। प्रति-सुधार आंदोलन (काउंटर रिफॉर्मेशन) का यह मुख्य लक्षण था। आंतरिक सुधारों से ध्यान हटाकर अलगाववाद की समस्या पर केंद्रित किया गया। इसके लिए अपेक्षाकृत अधिक युद्धप्रिय मार्ग अपनाया गया। तीसरी परिषद ने पोप की परमसत्ता पुनः पूरी तरह बहाल कर दी। धार्मिक अल्पसंख्यकों को दबाने के लिए स्पैनिश धर्माधिकरण को पवित्र कार्यालय (होली ऑफिस) के रूप में 1542 में रोम में भी स्थापित किया गया। इसका निहितार्थ भी

किसी प्रकार के समझौते को अस्वीकार करना था। यह अपधर्मियों के खिलाफ सख्त कार्रवाई का सुझाव देता था। इटली में लूथरवाद का पूरी तरह सफाया कर दिया गया। छापेखानों से धार्मिक और धर्मनिरपेक्ष साहित्य के प्रकाशन पर सख्त पाबंदी लगा दी गई। पॉल चतुर्थ ने 1559 में प्रतिबंधित पुस्तकों और [illegible]ों की सूची निकाली। अतः स्पेन ने सुधार और बदले की कार्रवाई दोनों को प्रभा[illegible] बकि रोम ने नेतृत्व और संस्थाएं मुहैया कराईं।

जेसुइट्स ने पोपतंत्र का वर्चस्व पुनः स्थापित करने में अहम भूमिका निभाई। बौद्धिक अनुशासन और इसके सशक्त संगठन ने केल्विनवादियों को जबरदस्त चुनौती दी। 1556 में लोयोला की मृत्यु के समय इसकी सदस्यता कोई एक हजार थी। तत्पश्चात इसमें बहुत तेजी से वृद्धि हुई और आधी सदी बाद यह लगभग सोलह हजार हो गई। अपने विरोधियों के हमले का जवाब देने के लिए इन्होंने विद्यालयों, उपदेशकों और राजनयिकों के रूप में एक प्रभावी संरचना का निर्माण कर लिया था। यूरोप के बाहर कैथोलिक मिशनों की नीति स्थानीय लोगों को अपने मत में धर्मांतरित करने की थी। इसमें उन्हें हर जगह सफलता नहीं मिली। दुनिया के कई भागों में पूर्व-विजित धर्म और परंपराएं चलती रहीं और कैथोलिक धर्म के साथ जीवित रहीं। कई स्थानों पर उन्हें स्थानीय लोगों के जबरदस्त विरोध का सामना करना पड़ा। कुछ मिशनरी व्यक्ति भी थे जिन्होंने अपेक्षाकृत धैर्य से काम लिया और स्थानीय लोगों में घुलमिलकर ईसा के उपदेशों का प्रचार करने का प्रयास किया। उन्होंने स्थानीय जीवन शैली अपनाई, स्थानीय लिवास पहनना शुरू किया और इस बात का खयाल रखा कि स्थानीय लोगों की भावनाओं को चोट नहीं पहुंचे। स्थानीय लोगों के साथ दोस्ती करने की यह नीति सोलहवीं सदी के दौरान जापान, चीन और भारत में फ्रैंसिस जेवियर, अलेसांद्री वैलिगनाने, मैटेयो रेसी और रॉबर्ट डी नोबली की कार्रवाइयों में देखी जा सकती है। कैथोलिक मिशनरियां खास तौर पर नई दुनिया में बहुत प्रभावी थीं जहां स्पेन और पुर्तगाल के विशाल उपनिवेश थे।

यूरोप में प्रबुद्धवादी शिक्षा, प्रभावी धर्मोपदेश, भव्य गिरजाघरों, विरोधियों के उत्पीड़न और जबरदस्त प्रतिबंध के कारण जर्मनी और बोहेमिया में हजारों लोग कैथोलिक धर्म में वापस आ गए। जेसुइट्स यूरोप में सबसे बड़े शिक्षक थे। उनके तहत कैथोलिक धर्म ने आक्रामक तेवर अपनाया।

धर्मसुधार आंदोलन के परिणाम

सोलहवीं सदी का यूरोपीय धर्मसुधार आंदोलन एक जटिल और असमान आंदोलन था। इसका यूरोपियों के राजनीतिक और सामाजिक-आर्थिक जीवन पर कई प्रकार से प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष प्रभाव पड़ा। चूंकि ईसाइयत शासकों के जीवन से जुड़ा था इसलिए इसका उन पर भी कुछ असर होना निश्चित था।

दांते

मार्टिन लूथर

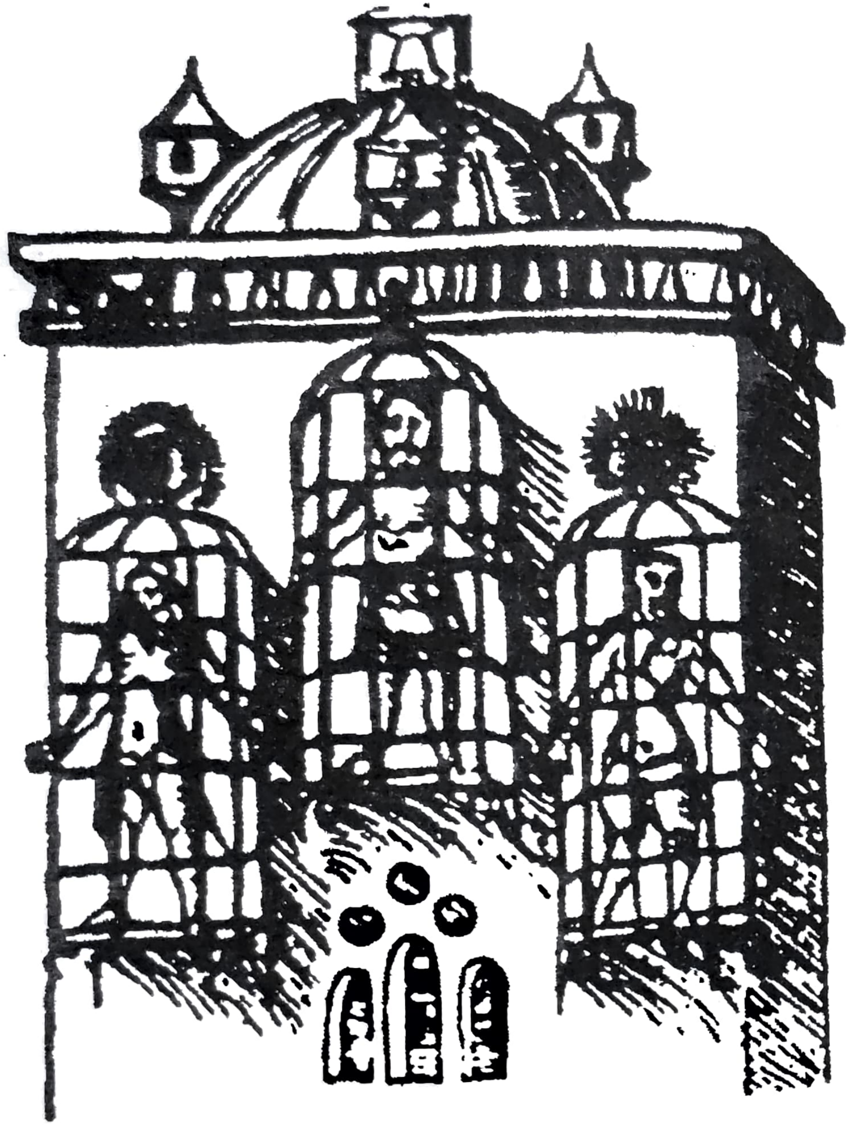

1535 में मंस्टर स्थित एनाबैपतिस्तों के पिंजरे

राजनीतिक परिणाम

प्रोटेस्टेंट धर्मसुधार आंदोलन के फलस्वरूप अनेक शाखाएं उत्पन्न हुईं और राज्य और चर्च के बीच संबंध के बारे में अलग-अलग विचार बने। अधिकांश प्रोटेस्टेंट क्षेत्रों में धर्मसुधार आंदोलन ने राष्ट्रीय चर्च की स्थापना द्वारा निरंकुश राज्यों के उदय में तेजी ला दी। इसमें धार्मिक संस्थाओं की कीमत पर राजाओं और मजिस्ट्रेट्स को लाभ होना स्वाभाविक था। इन क्षेत्रों के शासकों ने पोप की सांसारिक शक्ति को अस्वीकार कर चर्च और इसकी संपत्ति पर अपना आधिपत्य स्थापित कर लिया। कैथोलिक राज्यों में चर्च ने प्रोटेस्टेंटवाद की चुनौती का सामना करने के लिए राजतंत्र का समर्थन किया। यह कहना गलत होगा कि प्रोटेस्टेंटवाद ने आधुनिक राज्य का निर्माण किया लेकिन इसने काफी हद तक राज्य को धार्मिक वर्चस्व से मुक्त कर दिया। साथ ही इसने यूरोप में धर्मनिरपेक्ष राज्यों के निर्माण को बढ़ावा दिया जिसके उदाहरण नगर परिषदों और अन्य धर्मनिरपेक्ष संस्थाओं के सशक्तिकरण के रूप में मिलते हैं। दूसरी ओर धर्मसुधार आंदोलनों ने पश्चिमी सभ्यता में 'बहुलवाद' की समस्या की शुरुआत कर दी। धार्मिक, सामाजिक और सांस्कृतिक बहुलवाद जिसका सामना आधुनिक राज्यों को अभी भी करना पड़ रहा है।

धर्मसुधार आंदोलन का पहला परिणाम था कैथोलिक चर्च का कई भागों में विभाजन। हर समुदाय ने अपनी अलग पहचान बनाई (जिसे कभी-कभी कनफेशनलाइजेशन कहा जाता था)। यह समुदाय अत्यधिक संगठित था। इसके राजनीतिक, नैतिक और सामाजिक व्यवहार के बड़े सख्त नियम-कायदे थे। हर समूह की एक अलग सख्त पहचान थी जिससे आपसी संघर्ष काफी तीक्ष्ण होने लगे। प्युरिटनवाद के प्रभाव के कारण निर्धन और उदारता के प्रति सामाजिक दृष्टिकोण बदलने लगा। शुरुआत में विलियम पर्किन ने अपनी पुस्तक '*ट्रीटिजेज ऑफ वोकेशंस*' में भिखारियों और घुमक्कड़ों को 'घिनौनी अव्यवस्था' कहा क्योंकि उनका कोई व्यवसाय नहीं था। उन्होंने उनके खिलाफ पारित सख्त कानूनों की सराहना की। शासकों ने चर्च की संपत्ति तो उनसे छीन ली थी लेकिन गरीबों की सहायता का काम धर्मनिरपेक्ष सरकारों द्वारा तब तक आरंभ नहीं किया गया जब तक यह समस्या बहुत गंभीर नहीं बन गई। एलिजाबेथ के गरीब कानून (पुअर लॉ) से सामाजिक विधान का रास्ता खुल गया जिसे धार्मिक स्वीकृति प्राप्त थी।

प्रोटेस्टेंटवाद ने अप्रत्यक्ष रूप से राजनीतिक स्वतंत्रता के विचार को बढ़ावा दिया। लूथर और केल्विन राजनीतिक स्वतंत्रता की शिक्षा देते थे। लूथर इस बात पर जोर देते थे कि प्रजा को अपने शासकों के आदेश का पालन करना चाहिए जबकि केल्विन ने जेनेवा में एक धार्मिक राज्य का निर्माण किया था जिसमें नागरिकों के जीवन पर कड़ी नजर रखी जाती थी। केल्विन ने चर्च और राज्य को अलग रखा था और शांति-व्यवस्था बनाए रखने का कार्य राज्य को सौंपा था। फिर भी उन्होंने संकेत दिया कि अपवाद की स्थिति में शासक

की आज्ञा का पालन करने का अर्थ ईश्वर की अवज्ञा करना हो सकता है। ऐसी स्थिति में प्रजा को बाइबिल संबंधी व्यवस्था का अनुसरण करने के लिए ईश्वर के आदेश का पालन करना चाहिए न कि मनुष्य का। केल्विन के अनुसार यह प्रतिरोध व्यक्ति विशेष द्वारा नहीं बल्कि प्रतिनिधि सभाओं द्वारा किया जाना चाहिए। केल्विनवादियों द्वारा तुरंत इसका उपयोग फ्रांस, स्कॉटलैंड, नीदरलैंड्स और इंगलैंड में शासकों के विरुद्ध सशस्त्र विद्रोहों को उचित ठहराने के लिए किया गया। केल्विन के विचारों ने राजनीतिक उथल-पुथल और क्रांतियों को हवा दी। कई स्थानों में कुलीन वर्ग और अभिजात्य वर्ग के लोग अधिकाधिक उन धार्मिक आंदोलनों से जुड़ गए जिनके राजनीतिक आयाम थे। इन नेताओं को आसानी से दबाया नहीं जा सका था। फ्रांस में ह्युनॉट्स और नीदरलैंड्स में केल्विनिस्टों ने कैथोलिक राजाओं के खिलाफ राजनीतिक कार्रवाई के साथ धार्मिक मामलों को उलझा दिया। फ्लैंडर्स और निचले देशों (लो कंट्रीज) में भीड़ ने पादरियों पर हमले किए और गिरजाघरों की लूटपाट की। उन्होंने कैथोलिक मत से जुड़े संकेतों को नष्ट कर दिया। ये हिंसक गतिविधियां एक सशक्त सांकेतिक चरित्र को दरशाती थीं। कई स्थानों पर केल्विनिस्टों ने राजनीतिक सक्रियता दिखाई। फ्रांस और निम्न देशों में ह्युनॉट्स उन क्रांतिकारी पार्टियों के धार्मिक केंद्र बन गए जिनका नेतृत्व कुलीन वर्ग के लोग कर रहे थे। इंगलैंड में प्युरिटंस ने चार्ल्स प्रथम की सरकार के खिलाफ राजनीति गठबंधन बनाया। अतः धर्म के कारण राज्य और समाज के संबंध में तनाव और कड़ुवाहट उत्पन्न होने लगे। धर्म राजनीतिक झगड़ों के लिए एक नया मुद्दा बन गया। सत्रहवीं सदी में भी अनेक यूरोपीय राज्यों में धार्मिक तनाव दिखा।

लूथर का यह कहना था कि प्रत्येक मनुष्य अपना पुरोहित स्वयं है। उनके इस कथन और ईश्वर और मनुष्य के बीच सीधे संबंध के बारे में उनके विचारों को व्यक्तिवाद की दिशा में एक बड़े कदम के रूप में व्याख्या की जाती है। उनके सुधारों का जोर इस बात पर था कि दैवी ज्ञान निजी निर्णय के अधीन है और न्यू टेस्टामेंट के प्रकाशन के बाद विचारों की विविधता को प्रोत्साहित किया गया, हालांकि केल्विन के चर्च में इस प्रकार की कोई आजादी नहीं थी। कैथोलिक अनुयायी भी खास तौर पर काउंसिल ऑफ ट्रेंट में धार्मिक व्यक्तिवाद की स्पष्ट शब्दों में भर्त्सना करते थे।

पारिवारिक जीवन और महिलाएं

रोमन कैथोलिक धर्म में विवाह एक संस्कार माना जाता था। लेकिन चर्च ब्रह्मचर्य और संयम को शादी से अधिक श्रेष्ठ अवस्था मानता था। लूथर के अनुयायी परिवार के आदर्श को ब्रह्मचर्य के आदर्श से ऊपर मानते थे। लूथर ने स्वयं 1525 में कैथरीन से शादी की और उनकी पत्नी ने उनके जीवन में महत्वपूर्ण योगदान दिया। लूथर और केल्विन का सुझाव था कि कामवासना में पड़ने से बेहतर है विवाह कर लेना। ब्रह्मचर्य तभी अपनाना चाहिए जब काम इच्छाओं पर नियंत्रण करने की शक्ति हो। प्रोटेस्टेंट और कैथोलिक अनुयायियों दोनों

ने पारिवारिक जीवन के अपेक्षाकृत सकारात्मक पक्ष की वकालत करनी शुरू कर दी। प्रोटेस्टेंट परिवार को मानवजीवन का केंद्र मानते थे और पति और पत्नी के बीच परस्पर प्रेम पर बल देते थे। वे परिवार को और अधिक महत्वपूर्ण समझते थे क्योंकि प्रोटेस्टेंट अनुयायियों ने ब्रह्मचर्य और मठजीवन की विशिष्ट पवित्रता के विचार को नकार दिया था। लूथर के अनुयायियों ने दैनिक जीवन में विवाह को नई गरिमा प्रदान की। इससे न केवल पारंपरिक पितृसत्ता मजबूत हुई बल्कि पितृत्व की सामाजिक प्रतिष्ठा में भी वृद्धि हुई। ओजमेंट के अनुसार प्रोटेस्टेंट पादरी वर्ग का विवाह नए सामाजिक दृष्टिकोणों के अनुकूल साबित हुआ। पेशा या व्यवसाय के नए दृष्टिकोण द्वारा धार्मिक और धर्मनिरपेक्ष कार्य के मध्यकालीन द्वंद्ववाद को खारिज कर दिया गया। मानव समुदाय को मदद करने वाला कोई भी कार्य ईश्वर को खुश करने का कार्य समझा जाता था। प्रोटेस्टेंट जगत में पहले मठजीवन को स्वर्ग का मार्ग समझा जाता था। अब धीरे-धीरे इसका स्थान घर और विवाह ले रहे थे।

धर्मसुधार आंदोलन समर्थित धार्मिक आचरण दीर्घकाल में सार्वजनिक जीवन से निजी जीवन में आ गए। प्रोटेस्टेंट सुधारकों ने पुरुषों और महिलाओं को बाइबिल पढ़ने और धार्मिक सेवाओं में साथ में भाग लेने का सुझाव दिया। अप्रत्यक्ष रूप से उन्होंने लड़कियों की शिक्षा को प्रोत्साहन दिया ताकि वे बाइबिल और धार्मिक साहित्य पढ़ सकें। लेकिन उन्होंने सामाजिक वर्गों या लैंगिक समानता की परिकल्पना नहीं की।

धर्मसुधार आंदोलन से महिलाओं के जीवन में कोई अंतर आया या नहीं, इसका उत्तर तो सकारात्मक नहीं है। लूथर ने घरों के भीतर पति और पत्नी के बीच भागीदारी बढ़ाने को तो अवश्य प्रोत्साहित किया परंतु उनके लेखनों में हम ऐसा कुछ नहीं पाते जिसे महिलाओं की स्थिति को सुदृढ़ करने संबंधी सुधारक विचार कहा जा सके। केल्विन के समान ही लूथर भी महिलाओं को धर्मपरायण पत्नियां, माताएं मानते थे जो घरेलू कामकाज देखती हैं और अपने पतियों के अधीन रहती हैं। ईसाई धर्म सम्मत कार्य की अभिव्यक्ति के रूप में धर्मपरायणता को महिलाओं की सामाजिक भूमिका के साथ ज्यादा से ज्यादा जोड़ा जाने लगा। विशेष रूप से लड़कियों के लिए स्थापित विद्यालयों में भी धार्मिक अध्ययन और भावी घरेलू कार्यों में प्रशिक्षण के अलावा केवल स्थानीय भाषा पढ़ना सिखाया जाता था। लूथर सहित अन्य धार्मिक सुधारकों का महिलाओं के प्रति दृष्टिकोण प्रतिक्रियावादी ही रहा। लूथर ने एक औरत को दीवार में ठुकी हुई कील कहा ताकि वह घर में रहे और घरेलू कामकाज की देखभाल करे।

प्रोटेस्टेंट अनुयायियों द्वारा मठों को नष्ट किए जाने का मतलब महिलाओं के अनेक धार्मिक संघों का अंत था। यह सोलहवीं सदी में महिलाओं के लिए उपलब्ध कुछ पेशागत विकल्पों में से एक था। उन्हें इसके समान कोई अन्य विकल्प नहीं दिए गए। सत्रहवीं सदी के अंत में जाकर क्वेकर्स के बीच उन्हें धर्मप्रचारकों के रूप में एक सार्वजनिक भूमिका मिली। कैथोलिक चर्च में उर्सलाइंस जैसे कुछ महिला संगठनों ने उन्हें चर्च संगठन के

भीतर एक सक्रिय भूमिका अदा करने के कुछ मौके दिए। ज्विकेयर की नगर परिषद ने 1525 में एक महिला विद्यालय की स्थापना की। लेकिन इसका उद्देश्य लड़कियों को नैतिक शिक्षा देना था न कि उनका बौद्धिक विकास करना। इससे महिलाओं की स्थिति में कोई खास सुधार नहीं हुआ।

यूरोप के कुछ भागों में कुलीन महिलाओं का प्रोटेस्टेंट विचारों के प्रति जबरदस्त आकर्षण था। फ्रैंसिस प्रथम की बहन मार्गराइट ऑफ नवारे (1492-1549) ने दक्षिणी फ्रांस में अपना अलग दरबार बनाया था। यहां मानववादी और प्रोटेस्टेंट दोनों संरक्षण पाते थे। मार्गराइट की भक्तिपरक कविता *मिरर ऑफ दि सिनफुल सोल* महिला धर्मसुधारकों की प्रेरणा स्रोत थी। यहां तक कि एलिजाबेथ भी इससे काफी प्रभावित हुई। उन्होंने इसका अंगरेजी में अनुवाद करवाया। मैरी ऑफ हंगरी (1505-58) ने पवित्र रोमन साम्राज्य में इसी प्रकार की भूमिका अदा की। उन्होंने हंगरी में सुधारकों को संरक्षण देने का कार्य किया। लूथर ने सांध्यगीतों के एक संस्करण को उन्हें समर्पित कर विशिष्ट भेंट दिया। वास्तविकता देखें तो ये महिलाएं अपवाद थीं। धर्मसुधार आंदोलन में साधारण महिला इस प्रकार की भूमिका अदा नहीं कर सकती थी।

शिक्षा

साक्षरता की दृष्टि से प्रोटेस्टेंट धर्मसुधार आंदोलन और जेसुइट मिशनरी गतिविधि का यूरोप के कुछ भागों में महत्वपूर्ण प्रभाव पड़ा। लेकिन इसके कई अन्य कारण भी थे। पुनर्जागरण मानववाद ने शिक्षा की विषयवस्तु में पहले ही परिवर्तन ला दिया था। प्रोटेस्टेंट धर्मसुधारकों ने अपने माध्यमिक विद्यालयों और विश्वविद्यालयों में मानववादी पद्धतियों को सफलतापूर्वक कार्यान्वित किया। मानववादी विद्यालयों में संभ्रांतवर्गीय परिवारों के बच्चों को लिया जाता था। इसके विपरीत प्रोटेस्टेंट विद्यालयों में जनसामान्य के बच्चे भी पढ़ते थे। मार्टिन लूथर सभी बच्चों के लिए शिक्षा की वकालत करते थे जो कि उनके विचार में राज्य द्वारा मुहैया कराई जानी चाहिए। उन्होंने नगरों और गावों को सैक्सनी में विद्यालयों के लिए कोष इकट्ठा करने का सुझाव दिया। उनके साथी धर्मसुधारक मेलांक्थान को उनकी शिक्षा की योजना के लिए उन्हें 'दि टीचर ऑफ जर्मनी' की उपाधि दी गई। जर्मनी में मशहूर *जिमनैजियम* अथवा माध्यमिक विद्यालयों की स्थापना की गई जहां धार्मिक शिक्षा के साथ उदार कलाओं की और मानववादी शिक्षा प्रदान की जाती थी। स्ट्रॉसबर्ग स्कूल (1538) उस समय के लोगों के लिए एक आदर्श बन गया। लूथर और मेलांक्थान ने यूनिवर्सिटी ऑफ विटेनबर्ग में चिकित्सा विभाग को विकसित करने में महत्वपूर्ण योगदान दिया। मैक्स वेबर और कई अन्य लेखक आधुनिक विज्ञान के विकास में प्रोटेस्टेंट धर्म के योगदान पर जोर देते हैं (अध्याय नौ देखें)। केल्विन ने जेनेवन अकादमी की स्थापना की। इसमें निजी स्कूल या

जिमनेजियम और सार्वजनिक स्कूल थे। ये स्कूल सात कक्षाओं में विभाजित थे। अंततः यह एक विश्वविद्यालय बन गया। यहां केल्विन के विचारों के यूरोप में प्रसार के लिए शिक्षकों को प्रशिक्षण दिया जाता था। जॉन नॉक्स और उनके अनुयायियों ने स्कॉटलैंड के लिए शिक्षा की एक राष्ट्रीय प्रणाली तैयार की थी। इसी प्रकार कैथोलिक भी अच्छी शिक्षा पर बहुत जोर देते थे। जेसुइट्स ने खास तौर पर यूरोप के बाहर शिक्षा के क्षेत्र में अग्रणी भूमिका निभाई। शिक्षा का बहुत तेजी से विकास हुआ और 1550 और 1630 के बीच महाविद्यालयों का एक नेटवर्क तैयार हो गया। इस अवधि में केवल बावेरिया में नौ महाविद्यालयों की स्थापना हुई। जेसुइट्स ने नैतिक और धार्मिक शिक्षा मुहैया कराने के लिए थिएटर का एक लोकप्रिय साधन के रूप में इस्तेमाल शुरू किया। इसके पाठ्यक्रम में संगीत और नृत्य शामिल थे। कैथोलिक अनुयायियों और लूथर के अनुयायियों के बीच भजन गाना भी लोकप्रिय हो गया। लेकिन वे आरगन, बहुस्वरता और वृंदगायकों को नापसंद करते थे। वे मानते थे कि संगीत शिक्षाप्रद हो न कि ध्यान भटकाने वाला। प्रायः जेसुइट आर्डर की चिंता उच्च वर्गीय बच्चों को पढ़ाने की अधिक थी ताकि उन्हें प्रभावशाली पदों के लिए प्रशिक्षित किया जा सके। प्युरिटन शिक्षा ने धर्मसुधार के पहले के युग में मौजूद व्यवसाय के सिद्धांत से अपेक्षाकृत अधिक सशक्त सिद्धांत के विकास में योगदान किया। इससे व्यक्तिगत आत्मविश्वास के उदय में सहायता मिली। धर्मसुधार आंदोलन के साथ ही ईसाइयत के एक प्रमुख पहलू के रूप में ईश्वर के साथ व्यक्ति के संबंध पर अपेक्षाकृत अधिक जोर दिया जाने लगा। ऐतिहासिक साहित्य में प्युरिटनवाद को आधुनिकीकरण का एक महत्वपूर्ण कारक माना गया है।

धर्मसुधार आंदोलन ने न केवल मौजूदा धर्म में बल्कि धर्म के इतिहास में भी रुचि पैदा कर दी। चर्च का प्रथम विशद इतिहास इसी समय 13 खंडों में लिखा गया। इसका संपादन मैथ्यू फलैसियस ने किया। वह लूथर के सहकर्मी थे। उनकी पुस्तक *मैग्डेवर्ग सेंचुरीज* में पोप का नकारात्मक चित्रण किया गया। कैथोलिक चर्च ने इसकी प्रतिक्रिया में *इक्लेजियास्टिकल अनल्स* प्रकाशित करवाया। इसका संपादन सीजन बैरोनियस ने किया। अप्रत्यक्ष रूप से इन पुस्तकों ने ऐतिहासिक आलोचना के अध्ययन में योगदान किया। प्रत्येक राज्य में राष्ट्रीय चर्च के उदय से राष्ट्रीय साहित्यों का संवर्द्धन हुआ। इसमें स्थानीय भाषा में लिखे बाइबिल्स ने भी अहम भूमिका अदा की।

लोक संस्कृति

मध्य काल से ही अधिकांश यूरोपियों के दैनिक जीवन पर धर्म का बहुत बड़ा नियंत्रण था। अधिकांश स्थानों में पादरी वर्ग को नैतिक सत्ता प्राप्त थी। आत्माओं की मुक्ति के लिए यह खुद को आवश्यक संस्था मानता था। संस्कारों (जन्म, विवाह और मृत्यु पर महत्वपूर्ण कर्मकांडों) को कराने और स्वीकारोक्ति, जिसमें पश्चात्ताप और पापों की माफी शामिल

थी, पर उनका एकाधिकार था। साधारण ईसाई मानते थे कि पादरी वर्ग के बिना मोक्ष नहीं मिल सकता। एक कैलेंडर वर्ष में अनेक धार्मिक छुट्टियां होती थीं। लोगों की दिनचर्या के निर्धारण में लोकप्रिय धार्मिक त्यौहारों की अहम भूमिका थी। दरअसल लोक संस्कृति खास तौर पर धर्मसुधार आंदोलन के बाद काफी हद तक ईसाइयत द्वारा निर्मित थी।

लोक संस्कृति को अपने प्रभाव के संबंधित क्षेत्रों में परिवर्तित करने में प्रोटेस्टेंट और कैथोलिक धर्मसुधार आंदोलनों ने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। इसमें कई प्रचलित कर्मकांड और त्यौहार शामिल हैं। कार्निवल्स (आनंदोत्सव) लोक संस्कृति का मुख्य अंग था, खास तौर पर दक्षिणी यूरोप में। यह जनसाधारण के लिए बहुत ही मनोरंजन का समय होता था। वे खाते और पीते, एक-दूसरे पर अंडे और आटा फेंकते, खेल खेलते, नाटक और नृत्य करते, कुलीनों, पादरियों, राजाओं और रानियों की नकल उतारते थे। सोलहवीं सदी के दौरान यूरोपीय समाज में कार्निवल्स और चर्च अधिकारियों के बीच झगड़ा भी देखा जाता था। कुछ समकालीन चित्रों में कार्निवल्स और लेंट के बीच यह झगड़ा देखा जा सकता है। लेंट शब्द चर्च के पक्ष को दरशाता है। पादरी वर्ग और शिक्षित लोगों ने अनेक अर्द्ध-धार्मिक लोक त्यौहारों और विश्वासों जैसे मई दिवस (मे डे), फसल कटने पर उत्सव (हार्वेस्ट फीस्ट्स) और फीस्ट ऑफ फूल्स में सुधार करने या इन्हें दबाने के सुव्यवस्थित प्रयास किए। पीटर बर्क ने इसे 'लोक संस्कृति का सुधार' कहा। ये प्रयास भिन्न-भिन्न स्थानों पर, पीढ़ी-दर-पीढ़ी यहां तक कि एक ही धार्मिक संप्रदाय के भीतर अलग-अलग थे। कभी-कभी ये प्रयास पारंपरिक प्रथाओं को दबाने या विरोध करने के लिए होते थे जबकि अन्य अवसरों पर ये लोक धर्म की किसी खास प्रथा को शुद्ध करने के लिए किए जाते थे। लोक धर्मों के कुछ रूपों जैसे रहस्यमयी और जादू संबंधी नाटकों (मिस्ट्री और मैजिकल प्लेज) संतों के दिन, काड्र्स, भविष्यवाणी, गृहस्थों द्वारा लोगों को धर्मोपदेश, नृत्य, डाइसिंग, बुल फाइट्स (सांड की लड़ाई), टैवर्न्स एंड विचक्राफ्ट (मदिरालय और जादू-टोना) का धर्मसुधारकों और राज्य के अधिकारियों द्वारा विरोध किया गया। इन आपत्तिजनक उत्सवों में से कुछ कार्निवल्स में पाए गए थे और इसलिए ये कार्निवल्स उनका निशाना बन गए। परंपरा और विनियमन के बीच लड़ाई धर्मसुधार आंदोलन के साथ शुरू हुई, हालांकि छोटे पैमाने पर यह पहले भी मौजूद थी।

धर्म और जादू-टोना सदियों से लोगों की कल्पनाओं में एक-दूसरे से अंतर्गुंथित थे। चर्च लोगों के मस्तिष्क में प्रार्थना और जादू-टोना के बीच अंतर को सुलझा पाने में असफल रहा था। मध्य काल में पादरी वर्ग प्रचलित उत्सवों में भाग लेता था। लेकिन धर्मसुधार के प्रयासों के कारण वे अब इन गतिविधियों से दूर जा रहे थे। दक्षिणी फ्रांस में 'ट्विर्ल' कहे जाने वाले नृत्यों पर पाबंदी लगा दी गई क्योंकि नृत्य के क्रम में जब लड़के लड़कियों को उछालते तो लड़की के शरीर के कुछ हिस्से दिखते थे। इटली में बाजारों में किए जाने वाले हास्य नाटकों की जेसुइट्स द्वारा कटु आलोचना की जाने लगी थी। सभी

नृत्यों की आलोचना की गई लकिन कुछ लोक-नृत्यों की विशेष रूप से भर्त्सना की गई। सुधारक जनसाधारण को दिए जाने वाले धर्मोपदेशों को बरदाश्त नहीं करते थे। उन्हें लगता था कि ये उपदेश श्रोताओं के मनोरंजन के लिए काल्पनिक कहानियों पर आधारित हैं और इनमें साधारण बोलचाल की भाषा का इस्तेमाल किया जाता है। इस प्रकार के उपदेशकों पर दैवी वस्तुओं की निंदात्मक तुलना करने का आरोप लगाया जाता था। ईसाई विधान पर बनाए गए कुछ प्रचलित कर्मकांडों जैसे चारीवारी या बाल बिशपों या मूर्खों के अध्यक्ष के चयन को विवाह और धर्म के परम संस्कारों का उपहास माना जाता था। अधिकांश धर्मसुधारक लोक रीति-रिवाजों पर आपत्ति करते थे क्योंकि इन्हें गैरईसाई अवशेष और अंधविश्वास बढ़ाने वाला समझा जाता था। गैरईसाई देवी-देवताओं को राक्षस माना जाता था और उन्हें ईसाई धर्म के खिलाफ समझा जाता था। कार्निवल्स पर दो प्रमुख धार्मिक आपत्तियां थीं। पहली, इनमें मूर्तिपूजा के चिह्न निहित थे। दूसरी, कार्निवल लोगों को अति आनंदकामी बनाता था। इसी प्रकार जादू-टोना को भी मूर्तिपूजा का एक रूप माना जाता था। चमत्कार और जादू-टोना से मुक्ति का भी प्रयास किया जाता था। लोक संस्कृति पर नैतिकता के आधार पर भी हमला किया जाता था। यह आरोप लगाया जाता था कि ये उत्सव पाप और नैतिक पतन के कारण मनाए जाते हैं। इनमें भाग लेने वालों के लिए नशा करने और व्यभिचार के लिए खुला आमंत्रण होता है। सुधारकों के अनुसार नृत्य, संगीत और नाटकों से वासनाएं जागती हैं और नतीजतन अभद्रता और हिंसा होती है। लोकगीत शैतानों को नायक बना देते हैं। *दि शिप ऑफ फूल्स* और *डिस्कोर्स अगेंस्ट कार्निवल* जैसी कुछ पुस्तकों में चर्च के विचारों को व्यक्त किया गया। धर्मसुधारक पवित्र धर्म को लोकप्रचलित धर्म से अलग करने का प्रयास कर रहे थे।

पीटर बर्क का तर्क है कि आरंभिक आधुनिक काल में कैथोलिक सुधारक दो मोरचों पर लड़ रहे थे। एक ओर उन्हें प्रोटेस्टेंट अनुयायियों का मुकाबला करना पड़ रहा था तो दूसरी ओर वे पारंपरिक संस्कृति की अनैतिकता और अंधविश्वास से लड़ रहे थे। यह संशोधित कर्मकांडों, बिंबों और पुस्तकों के जरिए किया गया (पीटर बर्क, *पोपुलर कल्चर इन अर्ली मॉडर्न यूरोप*, पृ. 230)। कार्निवल्स में सामूहिक आग जलाने की प्रथा के स्थान पर प्रोटेस्टेंट नेताओं के पुतले और धर्मविरोधी पुस्तकें जलाई जाने लगीं। कुछ स्थानों पर प्रतिबंधित नाटकों का स्थान संगठित जुलूस ने ले लिया। दूसरी ओर कैथोलिक अनुयायियों ने लोक संस्कृति पर एकदम से हमला नहीं किया बल्कि उन्होंने उन पहलुओं का विरोध किया जिन्हें वे अतिवादी मानते थे। वे संतों की पूजा सहन कर लेते थे लेकिन उनसे सांसारिक कष्टों के निवारण की याचना करने का विरोध करते थे। उनकी रुचि त्यौहारों को समाप्त करने में नहीं बल्कि उनमें सुधार करने में थी। वे संत जार्ज की नागदैत्यरहित लोकप्रिय छवि को स्वीकार करते थे। वे पवित्र समय को सांसारिक सुखों के उत्सव में तबदील करने पर आपत्ति करते थे। वे चर्च परिसर में नाटक या नृत्य के आयोजन की

प्रचलित परंपरा का विरोध करते थे क्योंकि यह एक पवित्र स्थल माना जाता था। पादरी वर्ग को कार्निवल्स में भाग लेना, नृत्य या नाटक और सांड की लड़ाइयां देखना मना था। धर्मोपदेश देना लोगों तक पहुंचने का एक महत्वपूर्ण साधन बन गया। कुछ लोग इसे रोचक बनाने के लिए दृश्यों का भी सहारा लेते थे। जैसा कि बर्क कहते हैं, प्रोटेस्टेंट अनुयायियों के विपरीत रिफार्म्ड कैथोलिक अनुयायियों ने पुस्तकों के धर्म की बजाए मूर्तियों (छवियों) का धर्म मानना जारी रखा। इसका एक कारण शायद यह था कि प्रोटेस्टेंट क्षेत्रों की तुलना में कैथोलिक क्षेत्रों में साक्षरता कम थी। कुछ तो यह जेसुइट्स और नोबिली जैसे काउंटर रिफॉर्मिस्ट (प्रति-धर्मसुधारवादियों) और अन्यों की कार्यनीति का भी परिणाम था। उन्होंने स्थानीय लोक संस्कृति के प्रति समायोजनकारी मार्ग अपनाया था। कैथोलिक क्षेत्रों में स्पष्ट परिवर्तन संत इगनैशियस लोयोला, संत टेरेसा और जॉन नेपोमुक जैसे नए संतों के आगमन से हुआ। अब तत्वांतरण और पादरी वर्ग की भूमिका की प्रोटेस्टेंटों द्वारा अस्वीकृति की प्रतिक्रिया में प्रभुभोज के परम संस्कार पर अधिक जोर था। लोगों में स्वीकारोक्ति और परम संस्कारों के महत्व पर जोर दिया गया। अनेक भाषाओं में बाइबिल का अनुवाद किया गया। कम दरों पर भक्तिपरक पुस्तकों की छपाई की गई।

लोक संस्कृति के बारे में प्रोटेस्टेंट अनुयायियों और कैथोलिकों के विचार समान नहीं थे। प्रोटेस्टेंट अनुयायियों प्रचलित कर्मकांडों और उत्सवों को समाप्त करना चाहते थे जबकि कैथोलिक उनमें सुधार लाना चाहते थे। ज्विंगली जैसे कई प्रोटेस्टेंट धर्मसुधारों ने उपवास, संतों के नाम पर छुट्टियां मनाने और धार्मिक जुलूसों, हर उंगली में शादी की अंगूठी पहनने जैसे कर्मकांडों और सभी प्रकार के जादू-टोने की तीखी आलोचना की। ज्विंगली, केल्विन और अन्य क्रांतिकारी विचारक लोक संस्कृति के प्रति मार्टिन लूथर से अधिक आक्रामक थे। ज्यूरिक में संतों की सभी मूर्तियां नष्ट कर दी गईं। डच गणराज्य में आनंद विषयक गीत गाने और उत्सव मनाने के लिए युवकों को एकत्र करने के लिए घंटियां बजाने की भर्त्सना की गई। इंगलैंड में प्युरिटंस ने गेम्स, क्रिसमस फीस्टिंग, बीयर-बेटिंग, कॉफ-फाइटिंग (मुर्गे की लड़ाई) और लोकप्रिय धार्मिक नाटक के मंचन जैसे लोकप्रिय मनोरंजनों का विरोध किया। उनमें से अधिकांश तीर्थयात्रा के विचारों से भी असहमत थे। प्रोटेस्टेंट धर्मसुधारों में लूथर संतों की मूर्तियों और उत्सवों में लोगों के विश्वास के प्रति अपेक्षाकृत अधिक सहिष्णु थे। वह गीतों की रचना करके स्वयं संगीत को बढ़ावा देते थे। लूथर द्वारा पोप के अध्यादेश (पेपल बुल) जलाए जाने की घटना से छात्र इकट्ठे हुए। विटेनबर्ग में 10 दिसंबर 1520 को इसकी परिणति कार्निवल के रूप में हुई। आर. डब्ल्यू. स्क्रिबनर ने लूथर के निकट सहयोगियों द्वारा जुलूस निकाले जाने और पोप और पादरी वर्ग के खिलाफ व्यंग्यात्मक गीत गाए जाने के कई उदाहरण पेश किए हैं। मुंस्टर में पादरी, मठाध्यक्षों और संन्यासिनियों को हल में जोतकर कार्निवल के जुलूस में छात्रों द्वारा गलियों में घुमाया गया। यह माना जाता है कि लूथर के अनुयायी कम सहिष्णु थे। लोक संस्कृति पर

धर्मसुधार आंदोलन के प्रभाव का आकलन करना तो कठिन है लेकिन कुछ क्षेत्रों में यह देखा जा सकता है। निश्चित ही यह एक समान नहीं था। पारंपरिक धार्मिक और मिस्टरी नाटक धीरे-धीरे गायब हो गए क्योंकि चर्च ने इनके मंचन पर प्रतिबंध लगा दिया था। राज्य और प्रदेशों के अधिकारियों ने भी उन पर इसी प्रकार के प्रतिबंध लगा दिए। प्रोटेस्टेंट सुधारकों ने सामाजिक नजरिए और धार्मिक रिवायतों में कई आमूल परिवर्तन लाने की कोशिश की, यद्यपि उनमें से कई कोशिशें उस समय सफल नहीं हो सकी। उन्होंने धन के बदले दोषमोचन, पुरावशेषों और संतों की पूजा, तीर्थयात्राओं और मठवाद जैसे पारंपरिक रिवाजों को समाप्त करना चाहा। संतों की पूजा के अंत होने से धार्मिक या छुट्टी दिवसों की संख्या घट गई। प्रोटेस्टेंट केंद्रों में धार्मिक उत्सवों और प्रतिबिंब जैसे जुलूसों का स्थान निजी, पारिवारिक अथवा सामूहिक स्तरों पर पूजा के सरल रूपों ने ले लिया। पूजा स्थलों की किसी भी प्रकार की सजावट को निरुत्साहित किया गया। प्युरिटन चर्चों से वर्जिन मैरी की तसवीरें और मूर्तियां हटा दी गईं। धार्मिक कार्निवल्स, सेंट्स डे और पारंपरिक क्रीड़ाओं जैसे लोकप्रिय अवसरों को समाप्त कर दिया गया या निरुत्साहित किया गया। कुछ प्युरिटंस ने ताश खेलने, शराबखानों में शराब पीने, नाटक के मंचन और नृत्य पर प्रतिबंध लगाने का प्रयास किया जैसा कि इंगलैंड में ओलिवर क्रॉमवेल के शासनकाल में हुआ था। वहीं कुछ डच केल्विनिस्टों ने संत निकोलस के भोज पर उपहार देने की लोक संस्कृति को समाप्त करने का प्रयास किया। लोक संस्कृति की परंपरा इतनी सशक्त थी कि इसे पूरी तरह समाप्त नहीं किया जा सकता था।

धर्मसुधारक जानते थे कि पारंपरिक संस्कृति को मिटाने के लिए उन्हें नई संस्कृति का निर्माण करना पड़ेगा ताकि लोगों को मूल्य जैसी कोई चीज प्राप्त हो सके। इसलिए बाजारों और घरों में साधारण पुरुषों और महिलाओं को बाइबिल उपलब्ध कराई गई। पीटर बर्क (पृ. 223) के अनुसार देसी भाषाओं में बाइबिल का प्रकाशन एक बहुत बड़ी सांस्कृतिक घटना थी। इसने संबंधित देशों की भाषा और साहित्य को बहुत प्रभावित किया। स्क्रिबनर के अनुसार जर्मन धर्मसुधार आंदोलन व्यापक प्रचार का प्रथम महान युग था। प्रोटेस्टेंट लोक संस्कृति का एक महत्वपूर्ण रूप धर्मप्रश्नोत्तरी (कैटेकिज्म) था। यह न केवल साधारण पुरोहितों को धर्मज्ञान मुहैया कराने में सफल हुआ बल्कि गृहस्थों के जीवन में भी महत्वपूर्ण भूमिका अदा की। कभी-कभी धर्मप्रश्नोत्तरी कविता के रूप में तैयार की जाती थी ताकि लोग इसे कंठस्थ कर लें। कई स्थानों पर धर्मप्रश्नोत्तरी का ज्ञान *लॉर्ड्स सपर* (बड़े लोगों के भोज) में भाग लेने की आवश्यक शर्त बन गया। धार्मिक संगीत भी लूथरन लोक संस्कृति का हिस्सा बन गया। काष्ठचित्रों और चित्रों का भी लोगों के दिमाग पर असर पड़ा। इनसे साधारण लोग न केवल प्रसन्न होते बल्कि उनके विचार भी प्रभावित होते थे। धर्मसुधार आंदोलन के पहले यह आम धारणा थी कि कोई भी व्यक्ति जो संत क्रिस्टोफर की मूर्ति को जिस दिन देखेगा उस दिन उसकी मृत्यु नहीं होगी। नई कला स्थानीय लोगों के

सामाजिक दृष्टिकोणों के करीब थी। इसमें धार्मिक विवादों संबंधी चित्रों को भी प्रस्तुत किया जाने लगा। एरहार्ड स्कॉन धर्मसुधार आंदोलन युग के सबसे मशहूर काष्ठचित्रकार बन गए।

धर्मसुधारों से कला और संगीत में नई रचनाओं को भी प्रोत्साहन मिला। लूथर कला के बहुत बड़े प्रशंसक थे। वह यह मानते थे कि संगीत ईश्वर का दूसरा नाम है। उनका मशहूर गीत 'अ माइटी फॉर्ट्रेस इज आवर गॉड' अभी भी सर्वविदित है। बक्सटेहुड और बाक ने लूथर की पूजा के संगीतमय रूप की परंपरा जारी रखी। लेकिन स्विटजरलैंड में ज्विंगली और केल्विन इसके खिलाफ थे। वे संगीत को ध्यान-भंग करने का स्रोत मानते थे और पूजा के शुद्ध रूप पर बल देते थे। इसलिए जेनेवा के चर्चों में वाद्ययंत्रीय और आरगन संगीत पर पाबंदी लगा दी गई। इन स्थानों में अन्य कलाओं को भी क्षति पहुंची क्योंकि केल्विनिस्ट चर्च सभी प्रतिमाओं, शिल्पों और छवियों का विरोध करता था। पादरी वर्ग महिलाओं और युवकों की खास तौर पर कार्निवल और अन्य सांस्कृतिक उत्सवों में भागीदारी की आलोचना करते थे। प्रोटेस्टेंट चर्चों में कार्निवल करीब-करीब बंद कर दिया गया।

कैथोलिक धर्मसुधार आंदोलन कला की एक नई शैली, 'बराक' का महत्वपूर्ण स्रोत बन गया। इस शैली का विकास उत्तर पुनर्जागरण काल में हुआ। बराक शैली भड़कीलेपन, कीर्तस्तंभों और अलंकृति के जरिए कैथोलिक धर्मसुधार के पूरक का कार्य करती थी। इसे अकसर कैथोलिक चर्च में आध्यात्मिक जीवन का पुनर्जीवित समझा जाता था। बराक अनियमित रूप से अलंकरण दरशाती है। यह अलंकरण की शैली थी। सत्रहवीं सदी के आरंभ से यूरोप के कई देशों—ऑस्ट्रिया, जर्मनी, फ्लैंडर्स और कई कैथोलिक देशों में इसकी लोकप्रियता बढ़ गई। यह प्रोटेस्टेंट इंगलैंड में पौराणिक शैली की सुंदरता में घुलमिल गई और इसने ग्रीक और रोमन स्थापत्य कलाओं को पुनर्जीवित करने का प्रयास किया।

रोम में चर्च कला संरक्षण का एक महत्वपूर्ण केंद्र बना रहा। इसने धार्मिक विषय-वस्तुओं के अंकन और भावना को उजागर करने वाली कला को प्रोत्साहित किया। इस कला का जोर मानवता के पराभौतिक पहलू और आत्मा के अनुभव पर था। बराक कला में बारीकियों पर ध्यान दिया जाता था। महलों और गिरजाघरों के रूप में इसका स्थापत्य छतों, भित्तियों, बेदियों और मूर्तियों में अत्यधिक अलंकरण और जबरदस्त नक्कासी दरशाता है। इस शैली का उत्कृष्ट उदाहरण रोम में जेसुइट्स के गेसु चर्च में देखने को मिलता है जिसकी छतें रंगीन हैं और जिसमें बनावटी गुंबज है। इस शैली के सबसे मशहूर कलाकार जियांलोरेंजो बर्निनि (1598-1680) थे। वह वेनेसिया के शिल्पकार थे। वह कैथोलिक धर्मसुधार की भावना का प्रतिनिधित्व करते थे। बराक कला कभी-कभी बहुत अधिक अलंकृत दिखती थी। अठारहवीं सदी में यह रोक्को शैली में और भी अतिअलंकृत बन गई। इसके कई कलाकारों ने फ्रांस के लुई चौदहवां के समान शक्तिशाली राजाओं की सेवा की।

भव्यता पर इसके जोर के कारण बराक कला को परासत्तात्मक प्रकृति का माना जाता है।

अतः कहा जा सकता है, जैसा कि जॉक ली गॉफ कहते हैं, कि मध्यकालीन यूरोप में दो संस्कृतियां थीं : 'सुशिक्षित' संस्कृति या पादरी वर्ग की संस्कृति और लोक संस्कृति। यद्यपि दोनों संस्कृतियां बहुत अलग-अलग थीं और चर्च के प्रयासों के बावजूद लोक संस्कृति पूरी तरह समाप्त नहीं की जा सकी। पादरी वर्ग आम लोगों को स्वीकार्य हो, इसके लिए लोक संस्कृति के कुछ पहलुओं को समायोजित किया जाना था। लोक धर्म परिवर्तन कभी भी नाटकीय नहीं था। संकेतों, कर्मकांडों, भविष्यवाणियों और चत्कारों में विश्वास देखा जा सकता था। लेकिन अलग-अलग क्षेत्रों में इसकी अलग-अलग सीमा थी।

जादू-टोना

'विच-हंट' (डाइनों की तलाश) शब्द का मतलब बलि के बकरे की तलाश या किसी आपदा के लिए किसी को दोषी ठहराने का बहाना ढूंढना है। आज वैज्ञानिक ज्ञान की सहायता से मनुष्य ने प्रकृति के कई रहस्यों का समाधान ढूंढ लिया है लेकिन मध्यकालीन जगत में लोग कई प्राकृतिक परिघटनाओं से आशंकित रहते थे और हमेशा डर में जीते थे। ये डर बीमारियों, अकाल, बाढ़, तूफान, युद्ध और कर, और रहस्यमय मौतों के होते थे। वे अज्ञात बीमारियों से डरते थे। उनमें से कुछ बीमारियां नई दुनिया से आई थीं। फिर पारिवारिक समस्याएं भी थीं जैसे बांझपन और शिशु मृत्यु। दुनिया के कुछ हिस्सों में लोगों को शैतानों और दैत्यों की अलौकिक शक्तियों में भी विश्वास था। इन सभी घटनाओं के लिए बुरी आत्माओं को दोषी ठहराया जाता था जो आम तौर पर जादू-टोना की प्रथा में प्रकट होती थीं। डाइनें लोक धर्म की अंधविश्वासी मानसिकता का प्रतीक थीं। मध्यकाल में ग्रामीणों में प्रचलित अंधविश्वास की लोककथाओं में डाइन संबंधी धारणाएं मौजूद थीं जैसे उनके द्वारा जादू करना, बुरी आत्माओं पर काबू करना और चमत्कार करना आदि। कई लोग मानते थे कि डाइनों में उड़ने, आकृति बदलने की शक्ति होती है और वे ईसाइयत या ईसाई धर्म को कमजोर करने के लिए शैतानी षड्यंत्र कर सकती हैं। सोलहवीं सदी में डाइनों में यकीन काफी बढ़ गया। प्रोटेस्टेंट और कैथोलिक दोनों क्षेत्रों में खास तौर पर महिलाएं जादू-टोना और शिशुहत्या जैसी रिवायतों का शिकार हुईं। ईसाई चर्च की कल्पना यह थी कि शैतान और उसके दैत्य ईश्वर और धार्मिक लोगों को विस्थापित करने का प्रयास कर रहे हैं। नतीजतन बड़ी संख्या में बूढ़ी और निर्धन ग्रामीण महिलाओं पर मुकदमा चलाया गया और कई महिलाओं को डाइन कहकर फांसी दे दी गई। 1846 में दो डोमिनिकन धर्म न्यायाधिकरण के सदस्यों, हेनरीच क्रैमट और जेकब स्प्रेंगनर ने पोप इनोसेंट अष्टम के समर्थन से *दि हैमर ऑफ विचेज* नामक पुस्तक लिखी। उन्होंने काम वासना को इसका मुख्य कारण बताया क्योंकि महिलाएं शीघ्र ही बुराई की ओर प्रवृत्त हो जाती हैं। यौन क्रीड़ा के चरम क्षणों को

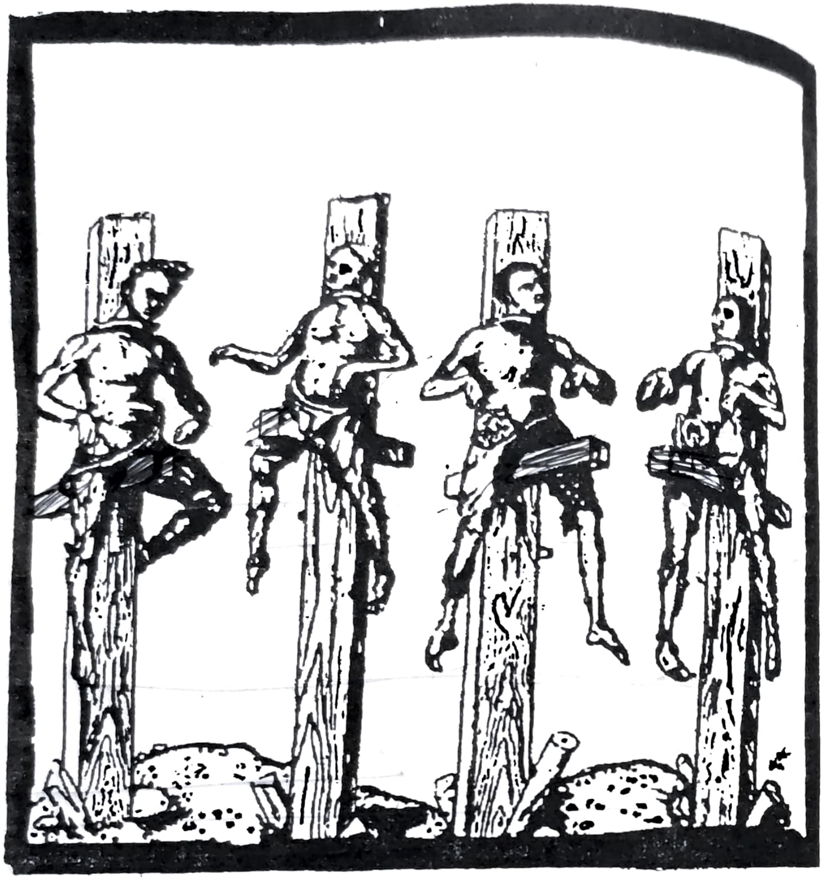

डाइनों को फांसी दिया जाना

डाइन संस्कृति का हिस्सा माना जाता था। माना जाता है कि डाइन संबंधी जादू-टोने के लिए एक लाख लोगों पर मुकदमा चलाया गया और लगभग साठ हजार लोगों को फांसी दे दी गई। सबसे अधिक मुकदमा चलाए जाने और फांसी देने की कार्रवाई 1560 और 1660 के बीच हुई। जोहानस डिलिंगर ने अपने हाल के अध्ययन में यह संख्या लगभग 50 हजार बताई है और उनका मानना है कि इसमें औरत और आदमी, दोनों ही शामिल थे।

सोलहवीं और सत्रहवीं शताब्दियों के इतिहासकारों ने डाइन के प्रति सनक को उलझन पैदा करने वाली घटना माना क्योंकि आम धारणा यह थी कि पुनर्जागरण के बाद का समय निरंतर प्रगति का था, यद्यपि इसमें स्थानीय और आवधिक भिन्नता भी थी। विभिन्न अनुशासनों के विद्वानों द्वारा डाइन के जादू-टोने की परिघटना की अलग-अलग व्याख्या की गई है। सामाजिक मानव विज्ञानी इसे जादू की धारणा सहित भावनात्मक रूप से मन में बैठे धार्मिक और मिथकीय विश्वासों का परिणाम मानते हैं। कारो बारोजा जैसे विद्वानों का मानना है कि आधुनिक काल के आरंभ में महिलाएं और पुरुष सामाजिक और सांस्कृतिक परिवर्तनों द्वारा उत्पन्न सामूहिक डर और चिंताओं से पीड़ित थे। जादू-टोना करने वाले मूल रूप से विवेकहीन लोग थे। मनोवैज्ञानिक इसे सामूहिक मानसिक पीड़ा और मतिभ्रम का परिणाम मानते हैं। हाल के एक विचार के अनुसार सोलहवीं सदी के दौरान डाइन के जादू-टोने की प्रथा में वृद्धि संभवतया यूरोपीय समाज पर सिफलिस के कारण हुई। इस विषय पर हाल के शोध इसे सामाजिक यथार्थ पर आधारित सांस्कृतिक परिघटना मानते हैं।

इस प्रथा में धर्मसुधार आंदोलन का किस सीमा तक योगदान था निश्चय के साथ नहीं बतलाया जा सकता क्योंकि यह प्रथा सदियों पुरानी है। जेफरी बर्टन रसेल का मानवविज्ञानी विश्लेषण मानता है कि डाइन की प्रथा ईसा पूर्व यूरोप में मौजूद थी। उनके अनुसार पंद्रहवीं सदी में डाइन के टोटके में जादू के तत्व और प्राचीन गैरईसाई परंपराएं साथ ही ईसाइयत और रूढ़िवादी समाज का विरोध और इसकी अवज्ञा शामिल थीं। इसने अपधर्म का रूप धारण कर लिया। नॉर्मन कोहन का नजरिया इसके विपरीत है। उनके अनुसार जादू-टौना शैतान की पूजा पर आधारित था। यह लोक संस्कृति का हिस्सा नहीं था। यह पुरोहितों के एक छोटे समूह तक सीमित था। समाज में इन विचारों का प्रसार सोलहवीं और सत्रहवीं शताब्दियों के दौरान होने लगा। बहुत से चर्च अधिकारी और धर्मशास्त्री शैतान की पूजा और डाइनों में विश्वास करने लगे। वे उन्हें ईसाई मत के लिए खतरा मानने लगे। कोहन के अनुसार लोककथा, जादू-टोना, कर्मकांडीय चमत्कार और शैतान की पूजा इन अलग-अलग तत्वों को बौद्धिकों और धर्मशास्त्रियों द्वारा एक में मिलाकर भिन्न मतावलंबी समूह बना दिया गया। पंद्रहवीं सदी के अंत तक वशीकरण और शैतान की पूजा की अवधारणा ने भयावह रूप ले लिया। कैथोलिक नेताओं और विधिवेत्ताओं ने इस संबंध में सिद्धांत प्रतिपादित करना शुरू किया। लेकिन सत्रहवीं सदी में कैथोलिक और प्रोटेस्टेंट अभिजात्यों ने कहा, डाइन वह नहीं जो केवल नुकसानदेह टोटका कर सकती है बल्कि वह अपधर्मी

भी होती हैं। उन पर मुकदमा चलाने वाले अधिकारी कोई सबूत नहीं होने पर भी मानते थे कि वे शैतान की पूजा करती हैं और शैतान उनके वश में होता है। उस समय की न्याय प्रक्रिया में सच उगलवाने के लिए यातना देने की अनुमति थी। सबसे बुरी यातना के बाद दोषी वह कहने को तैयार हो जाती जो बंदीकर्ता सुनना चाहता थे। जिन पर आरोप तय हो जाता उनमें से 80 प्रतिशत से अधिक महिलाएं होतीं जिन्हें अकसर जिंदा जला दिया जाता था। ईसाई धर्मसिद्धांत और समकालीन लेखनों में महिलाओं को पुरुषों से नैतिक दृष्टि से कमजोर दिखाया जाता था। साधारण लोगों की गरीबी, खास तौर पर अकेली और बूढ़ी महिलाओं की गरीबी उन्हें शैतान को लुभाने या डाइन होने के आरोप के लिए संवेदनशील बना देती थी। मध्यकाल तक आते-आते डाइनों को शैतान की दासी समझा जाने लगा था। यह आम धारणा बन गई थी कि वे ईसाइयत को त्यागकर शैतानों की सेवा में लग जाती हैं। लोगों के दिमाग में शैतानी डाइनों की एक छवि बन गई। उन्हें ईश्वर और परियों के विरुद्ध दरशाया जाता था। पुरोहितों के प्रचार के आधार पर यह भी आम धारणा बन गई थी कि डाइनों में शैतान को बुलाने की शक्ति होती है। वे विश्राम दिवसों (इतवार) को नियमित रूप से मिलती हैं और नरभक्षण और रतिक्रिया करती हैं। वे उड़ भी सकती हैं। उनमें रूप बदलने की क्षमता होती है। यह आरोप लगाया जाता था कि डाइनें दुर्भाग्य लाती हैं, जानवरों और मनुष्यों का गर्भपात करवा सकती हैं, तूफान ला सकती हैं और तबाही मचा सकती हैं। अनेक धर्मशास्त्रियों और जजों ने यह दिखाने का प्रयास किया कि दोषी डाइनें शैतान के राज्य का मूर्त रूप हैं। कुछ ने आरोप लगाया कि वे कई पतियों को खा गईं अथवा वे लैटिन प्रार्थनाओं को उलटा पढ़ती थीं और ईसाइयों की आस्था को ठेस पहुंचाने के लिए बेदी की ओर अपनी पीठ रखती थी। बर्खार्ट ने इतालवी पुनर्जागरण पर अपनी पुस्तक में जादू और अंधविश्वास के अन्य रूपों के बारे में रोचक जानकारी दी है। उनके अनुसार जादू-टोना की उत्पत्ति जर्मनी में हुई। इसका आम तौर पर प्रयोग ग्रामीण इटली में किया जाता था जबकि जादूगरनियां शहरी क्षेत्रों में अधिक देखी जाती थीं। जादू-टोना का प्रयोग केवल कैथोलिक देशों तक सीमित नहीं था। इंगलैंड में प्यूरिटंस फांसी देने में सक्रिय रूप से शामिल थे। विच फाइंडर जेनरल (डाइन खोजने वाले अधिकारी) मैथ्यू हॉपकिंस जैसे कई लोगों ने इससे बहुत धन कमाया। इंगलैंड में जादू-टोना चर्च संबंधी अपराध रहा। सौ वर्षीय युद्ध (हंड्रेड ईयर्स वार) के दौरान फ्रांसीसी ग्रामीण महिला जॉन ऑफ आर्क ने इंगलैंड के सैनिकों को पीछे धकेलने में अग्रणी भूमिका निभाई। वह पुरुषों की पोशाक में सामने आई और फ्रांस के शासक चार्ल्स के सैनिकों का नेतृत्व किया। वह अंगरेजों द्वारा बंदी बना ली गई। एक अपधर्मी के रूप में उसकी भर्त्सना की गई और उसे जिंदा जला दिया गया। उस पर डाइन होने का आरोप था। जर्मनी में मार्टिन लूथर और मेलांक्थान को जादू-टोने की शक्ति में पूरा विश्वास था। लूथर शैतान की शक्ति के बारे में बातें करते थे। उनका मानना था कि डाइनों के जरिए वे मनुष्यों और पशुओं को क्षति पहुंचा सकते हैं और तूफान

ला सकते हैं। मजे की बात यह है कि उस समय के कुछ वैज्ञानिक भी जादू और अलौकिक प्राणियों की शक्ति में विश्वास करते थे।

सत्रहवीं सदी का अंत आते-आते इस अपमानजनक सामाजिक प्रथा का अंत हो गया क्योंकि तब सामाजिक और बौद्धिक वातावरण धर्म से अलग हटकर वैज्ञानिक सोच में बदल गया था। जर्मन जेसुइट फ्रेडरिक और फ्रांसीसी विद्वान एफ बॉवोट जैसे कुछ व्यक्तियों ने अपने लेखनों के जरिए डाइनों को मारने की प्रथा के खिलाफ प्रचार किया। कई वैज्ञानिकों ने इन आचरणों की विवेकहीनता को उजागर किया। यह मानना गलत होगा कि अठारहवीं सदी में यह प्रथा पूरी तरह खतम हो गई लेकिन निश्चित तौर पर प्रबुद्धवादी आंदोलन से जुड़े लोगों के प्रयासों से इसके प्रति अविश्वास पैदा हुआ। वाल्तेर ने अपनी प्रतीकात्मक व्यंग्यात्मक शैली में इस प्रथा की आलोचना की। उन्होंने इसे जाड़े की लंबी रातों में कुलीन वर्ग की ऊब का परिणाम बताया। अठारहवीं सदी के दौरान बुद्धिवादी विचारों की लोकप्रियता के परिणामस्वरूप अनेक पुस्तकों का प्रकाशन हुआ। इनमें डाइनों और उनके नरभक्षण जैसी धारणाओं की कटु आलोचना की गई। जैसा कि *वेस्टर्न सिविलाइजेशन, दि कंटिन्यूइंग एक्सपेरीमेंट* (नोबल, और अन्य) के लेखकों ने लिखा कि डाइनों की तलाश धर्मसुधार आंदोलन के इतिहास का अंतिम अध्याय और आधुनिक राज्य के इतिहास का प्रथम अध्याय है।

धर्मसुधार आंदोलन का आर्थिक प्रभाव

धर्मसुधार आंदोलन को कभी-कभी एक क्रांतिकारी घटना माना जाता है क्योंकि यह सामंतवाद के लिए एक नए वर्ग की चुनौती का प्रतिनिधित्व करता था। साथ ही दीर्घकाल में पुराने चर्च के अपदस्थ होने से साक्षर वर्गों की सोच में धीरे-धीरे धर्मनिरपेक्षता की भावना आने लगी। लूथर का यह विचार था कि धर्म के सभी मानने वाले अपनी आध्यात्मिक नियति के खुद मालिक हैं। उनके इस विचार ने व्यक्तिवादी नैतिकता की उत्पत्ति में योगदान दिया। कुछ इतिहासकारों के अनुसार यह धार्मिक व्यक्तिवाद मानववाद के बौद्धिक व्यक्तिवाद का दूसरा पक्ष था और इसने पूंजीवाद के विकास को प्रोत्साहित किया।

केल्विनवाद और यूरोप के आर्थिक विकास के बीच का संबंध यूरोप के विद्वानों के बीच गरमागरम बहस का मुद्दा रहा है। केल्विनवाद उभर रहे पूंजीवाद से जुड़ा था या नहीं अथवा व्यावसायिक उद्यम और धार्मिक उत्साह के बीच कोई संबंध था, यह प्रश्न अकादमिक जगत में विवाद का बड़ा मसला रहा है।

बहस के दौरान विद्वानों ने कई प्रश्न उठाए। क्या प्रोटेस्टेंटवादी जोश ने पूंजीवादी विस्तार की शुरुआत की जबकि कैथोलिकवाद इसे निरुत्साहित करता था? क्या यह संयोग था कि सबसे बड़ा व्यावसायी प्रोटेस्टेंट हॉलैंड और एंग्लिकन इंगलैंड में रहता था, जो कि उस समय के सबसे औद्योगीकृत क्षेत्र थे? एक व्यावसायिक समुदाय के रूप में ह्युनॉट्स का

कैथोलिक फ्रांस में दबदबा क्यों था? किस प्रकार प्रोटेस्टेंट ब्रैंडेनबर्ग प्रशा एक मात्र जर्मन राज्य था जो सत्रहवीं सदी में केल्विनिस्ट निर्वाचक के नेतृत्व में अधिकाधिक संपन्नता का अनुभव कर रहा था? और क्यों कैथोलिक इटली, पुर्तगाल अथवा फ्लैंडर्स—जो 1559 के पहले तरक्की कर रहे थे, सत्रहवीं सदी में पिछड़ने लगे और इन्हें आश्चर्यजनक आर्थिक गिरावट का सामना करना पड़ा? इस प्रकार के प्रश्नों पर बीसवीं सदी के विद्वानों में निरंतर चर्चा होती रही है।

उन्नीसवीं सदी के मध्य में कार्ल मार्क्स ने कहा कि प्रोटेस्टेंटवाद ने बुर्जुआ मितव्ययता, कठिन श्रम, स्व-अनुशासन और विवेकशीलता के नए पूंजीवादी मूल्यों को अभिव्यक्ति दी। अतः प्रोटेस्टेंटवाद पूंजीवाद के उदय होने के कारण सफल हुआ। फ्रेडरिक एंगेल्स ने भी पूर्वनियति के केल्विनवादी धर्मसिद्धांत को व्यावसायिक क्षेत्र में सफलता या असफलता की अनिश्चितता में निहित बताया। यह पूंजीवादी भावना को दरशाता था।

वास्तविक विवाद मैक्स वेबर की पुस्तक *दि प्रोटेस्टेंट इथिक एंड दि स्पिरिट ऑफ कैपिटलिज्म* के प्रकाशन के बाद 1905 में शुरू हुआ। ई. ट्रॉलस्क ने अपनी पुस्तक *दि सोशल टीचिंग ऑफ दि क्रिश्चियन चर्चेज* में इसे और आगे बढ़ाया। वेबर का तर्क था कि पूंजीवादी भावना प्रमुखतया आर्थिक कारकों द्वारा उत्पन्न नहीं थी। आधुनिक पूंजीवाद के विकास को सामाजिक लोकाचारों-विश्वासों के एक समुच्चय से प्रोत्साहन मिला। उनके अनुसार पूंजीवादी किस्म के उद्यम धर्मसुधार आंदोलन के पहले भी मौजूद थे। लेकिन उनमें पूंजीवादी भावना की कमी थी। मध्य युग के दौरान और पुनर्जागरण काल में बहुत से पूंजीपति थे। लेकिन वे व्यवसायी यूरोपीय समाज में व्यापक स्तर पर लाभ कमाने की प्रवृत्ति नहीं ला सके। इसे विकसित करने के लिए एक बौद्धिक क्रांति की आवश्यकता थी जो प्रोटेस्टेंट धर्मसुधार आंदोलन द्वारा प्रदान की गई। वेबर का मानना था कि आरंभिक प्रोटेस्टेंट सुधारक खास तौर पर केल्विन और उनके अनुयायियों ने सोलहवीं और सत्रहवीं सदियों में पूंजीवाद के विकास को जबरदस्त ढंग से प्रभावित किया। वेबर ने पूंजीवादी भावना को काफी सूझबूझ के साथ योजनाकारी और अति सुव्यवस्थित ढंग से किया गया लाभ कमाने का प्रयास बताया न कि लाभ, सत्ता या गौरव के लिए विवेकहीन लालच। उन्होंने मेदिचीज या फ्यूगर्स जैसे धर्मसुधार आंदोलन पूर्व के व्यावसायी बैंकरों में यह विवेकवान पूंजीवाद नहीं पाया। राजाओं और पोप को ऋण देने में और बाहरी राजनीतिक परियोजनाओं या कला के संरक्षण के वित्तपोषण में उनका लालच झलकता था। वेबर आधुनिक पूंजीवादी भावना की शुरुआत सोलहवीं सदी के इंगलैंड और नीदरलैंड के छोटे व्यापारियों में देखते हैं। उन्हें केल्विन के नैतिक उपदेशों से व्यवसाय करने की महती प्रेरणा मिली। प्रोटेस्टेंटवाद ने पूंजीवाद को एक विशिष्ट गति दी और प्रोटेस्टेंट्स अपने पूर्वनियति के सिद्धांत के कारण सर्वश्रेष्ठ पूंजीपति बने।

मैक्स वेबर ने इस प्रोटेस्टेंट विचार पर जोर दिया कि हर व्यक्ति का सांसारिक कार्य या

उसकी आजीविका उसे ईश्वर प्रदत्त 'पेशा' है। केल्विन के सिद्धांत ने अंदरूनी अकेलापन और बाहरी अनुशासन, तपस्या और उद्यमशीलता के गुण पैदा किए। व्यवसाय का सिद्धांत आत्म-अनुशासन और कठिन परिश्रम और उन सभी गुणों पर बल देता था जिनसे व्यवस्थित व्यावसायिक प्रक्रियाओं और व्यावसायिक सफलता में सहायता मिलती हो। इस प्रकार यह सिद्धांत आधुनिक पूंजीवाद की भावना का पोषण करता था। अब धन कमाना निंदनीय नहीं था जैसा कि पहले समझा जाता था। केल्विनवादियों के अनुसार यह 'कार्य नीति' (वर्क इथिक) को पूरा करने और पवित्र उत्तरदायित्व का निर्वाह करने का तरीका है। अतः वेबर के अनुसार पूंजीवाद का उदय उन क्षेत्रों में बहुत तेजी से हुआ जिन क्षेत्रों ने केल्विनवाद अपनाया। वेबर के सिद्धांत का विकास मार्क्सवादी विचारों के विरुद्ध हुआ (जो केवल आर्थिक और भौतिक कारकों को ही परिवर्तन का उपकरण मानते थे)। वेबर ने मस्तिष्क, विचारों और वातावरण के महत्व पर जोर दिया। हालांकि आने वाले समय में उनका सिद्धांत बहस और आलोचना का विषय बन गया।

वेबर के तर्कों की कुछ स्पष्ट सीमाएं हैं। एम.जे. किच के अनुसार उनका सिद्धांत अन्य सिद्धांतों की तुलना में अधिक मनोवेगपूर्ण लेकिन भ्रमित करने वाला है। वह इस अस्वीकार्य धारणा से शुरू करते हैं कि पूंजीवादी भावना मानवीय प्रकृति के विपरीत है। मनुष्य को केवल अपने ऊपर छोड़ दिया जाए तो वह उतना ही प्राप्त करना चाहेगा जितने में उसका गुजारा हो जाए। केई विद्वान इस विचार को स्वीकार नहीं करते हैं। वेबर विवेकपूर्ण उद्यम के जरिए लाभ कमाने के निरंतर प्रयास को पूंजीवाद मानते हैं। यह व्याख्या केवल उचित रूप से विकसित अर्थव्यवस्थाओं के लिए लागू होती प्रतीत होती है। यद्यपि यूरोपीय व्यावसायिक गतिविधियों और आर्थिक वातावरण पर धर्मसुधार आंदोलन के प्रभाव का ठीक-ठीक निर्धारण नहीं किया जा सकता, फिर भी वेबर के विचारों ने एक रोचक बहस की शुरुआत कर दी।

फेलिक्स रैक्फहल ने लेखों की एक शृंखला में वेबर की आलोचना शुरू की। बाद में अन्य लेखकों ने भी उनकी आलोचना की। रैक्फहल आर्थिक गतिविधियों के नैतिक और धार्मिक प्रेरणा द्वारा प्रभावित होने के विचार को संदेहजनक मानते हैं। प्रेरक शक्ति अन्य कई कारक हो सकते हैं। दूसरा, इसमें कोई संदेह नहीं है कि केल्विन वाणिज्य और उद्योग के महत्व पर जोर देते थे वे और अन्य कैथोलिक उपदेशकों से अधिक प्रबुद्ध थे। ऋणों पर ब्याज के विषय पर उन्होंने कठोर नैतिक शर्तें रखी थीं, जो प्रायः उतनी ही प्रतिबंधक रचनात्मक थी जितनी कैथोलिक चर्च की शर्तें थीं। केल्विनवाद में भी असीमित और अनियंत्रित पूंजीवाद सहन नहीं किया जाता था। तीसरा, प्रोटेस्टेंटवाद के भौगोलिक वितरण पर भी वेबर के विचार पर प्रश्न खड़े किए गए। एम्स्टर्डम लंबे समय तक स्पेन शासन के अधीन था, जो एक कैथोलिक क्षेत्र हुआ करता था। एंटवर्प भी एक कैथोलिक केंद्र था लेकिन यह महत्वपूर्ण व्यापारिक केंद्र भी था। यह कहा जा सकता है कि पूरे डच गणराज्य

के सबसे अधिक संपन्नता के दिनों में जिन प्रदेशों में केल्विनिस्ट आबादी सबसे अधिक थी, पूंजीवादी विकास की प्रक्रिया में उनका हिस्सा न्यूनतम था। दो सर्वाधिक केल्विनिस्ट आबादी वाले प्रदेशों—फ्राइसलैंड और ग्रोनिंजेन, हॉलैंड के साथ स्पर्द्धा करने में असफल रहे। इन आपत्तियों के बावजूद रैक्फहल अपने निष्कर्ष में वेबर के प्रमुख तर्क को स्वीकार करते हैं। वह यह निष्कर्ष देते हैं कि प्रोटेस्टेंटवाद में वे बाधक शक्तियां नहीं थीं जो कैथोलिक धर्म में आर्थिक विस्तार की दिशा में जाने वाली सड़क का रास्ता रोक कर खड़ी थीं। प्रोटेस्टेंटवाद में उनकी अनुपस्थिति ही इसे आर्थिक नेतृत्व के लायक बनाती है।

एच.एम. रॉबर्टसन का तर्क है कि पूंजीवाद और पूंजीवादी भावना धर्मसुधार के विचारों से काफी पहले से मौजूद थी। वह इतालवी व्यापारिक नगरों की परिघटनाओं का विश्लेषण करते हैं। रॉबर्टसन कहते हैं कि कैथोलिकवाद ने भी पूंजीवादी भावना का पोषण किया। इसके लिए वह फ्रैंसिस्कंस की मितव्ययिता का उदाहरण देते हैं। रॉबर्टसन 'व्यवसाय' के महत्व को अस्वीकार करते हैं। उनका तर्क है कि यह कैथोलिक विचारों में भी मौजूद था। यदि आर्थिक गतिविधि के बारे में दृष्टिकोण में कोई परिवर्तन हुआ तो वह सत्रहवीं सदी के उत्तरार्द्ध में हुआ जब उद्योग मितव्ययिता और श्रम ईश्वरीय कार्य बन गए।

लूजो ब्रैंटेनो भी पूंजीवाद की बहुत संकीर्ण परिभाषा देने के लिए वेबर की आलोचना करते हैं जिसमें केवल प्युरिटन समाज ही शामिल किए जा सकते हैं। इतना ही नहीं उनका तर्क है कि पूंजीवाद और धन कमाने की इच्छा इतालवी नगरों में धर्मसुधार के काफी पहले से थी। जब आर्थिक केंद्र भूमध्यसागर से बदलकर उत्तरी सागर हो गया तो कैथोलिक व्यापारी परिवारों ने भी औपनिवेशिक व्यापार में भाग लेने के लिए प्रवास किया लेकिन वे कैथोलिक धर्म ही अपनाए रहे। ब्रैंटेनो कहते हैं 'व्यवसाय' की अवधारणा कैथोलिकों के लिए कोई अजनबी नहीं थी। यह बाइबिल के लैटिन संस्करण में देखी जा सकती है। वह रोम के कानून की भूमिका और व्यवसाय कार्य के प्रति इसकी अभिवृत्ति पर भी बल देते हैं। रोम के कानून का पुनरुत्थान और इसकी प्रधानता कैथोलिक या प्रोटेस्टेंट मत से स्वतंत्र थी।

एक प्रख्यात गैरमार्क्सवादी विद्वान और ईसाई समाजशास्त्री आर.एच. टॉनी ने तर्क दिया कि सोलहवीं सदी में पूंजीवाद नया नहीं था, न ही यह केवल प्रोटेस्टेंट धर्म तक सीमित था। उन्होंने केल्विनवाद के महत्व को वेबर से अधिक जोरदार तरीके से रेखांकित किया। साथ ही लूथर और केल्विन के बीच अंतर पर वेबर से ज्यादा सौम्य तरीके से बल दिया। टॉनी ने देखा कि नवोदित पूंजीवाद ने ही उद्यम और धन संचय के बारे में केल्विन के विचारों का निर्माण किया है न कि इसके विपरीत। इसकी भूमि स्पेन, इटली और पुर्तगाल में तैयार हुई थी। टॉनी के अनुसार पूंजीवाद की भावना उतनी ही पुरानी है जितना पुराना मानव इतिहास। सोलहवीं और सत्रहवीं सदियों में आर्थिक परिवर्तन धार्मिक परिवर्तन के साथ हुआ और धार्मिक नजरिए में परिवर्तन को प्युरिटंस ने और भी स्पष्ट बना दिया।

इस प्रकार टॉनी ने वेबर की थीसिस को उलटा कर दिया और यह तर्क दिया कि सत्रहवीं सदी में केल्विनवाद ने खुद को 'बुर्जुआ' और वाणिज्यिक वर्गों की पूंजीवादी प्रकृति के अनुकूल बनाया और उद्यम करने को प्रोत्साहन दिया। लोग पूंजीपति नहीं बने क्योंकि वे केवल प्रोटेस्टेंट थे, न ही वे प्रोटेस्टेंट बन गए क्योंकि वे पूंजीपति थे। एक ऐसे समाज में जो पहले से ही पूंजीवादी बन रहा था प्रोटेस्टेंटवाद ने नए मूल्यों की जीत को आसान बनाया। जहां पूंजीवाद पहले से मौजूद था, वहां इसके लिए अब अपेक्षाकृत अधिक खुला दायरा बना। वेबर के अनुसार पूंजीवाद प्रोटेस्टेंटवाद के गौरवों में से एक था और वह इसके परिणामस्वरूप होने वाले विशाल भौतिक विस्तार की प्रशंसा करते हैं। टॉनी ने न केवल पूंजीवाद की आलोचना की क्योंकि यह सामाजिक न्याय मुहैया कराने में असफल रहा था बल्कि प्रोटेस्टेंटवाद की भी आलोचना की क्योंकि इसने गरीबी और उदारता के ईसाई संदेश को एक ऐसे धर्मोपदेश के रूप में विकृत किया जिसमें सफलता कार्य को पवित्रता प्रदान करती थी और लाभ कमाना धर्मपरायण कार्य था।

क्रिस्टोफर हिल का तर्क है कि प्रोटेस्टेंटवाद में ऐसा कुछ नहीं था जिसके परिणामस्वरूप स्वतः पूंजीवाद का उदय हो जाए। इसका महत्व यह था कि इसने पूंजीवाद की उन रुकावटों को कम किया जो कैथोलिकवाद की अपेक्षाकृत कठोर संस्थाएं और कर्मकांड थोपते थे। एक ऐसे समाज में जो पहले ही पूंजीवादी बन रहा था, प्रोटेस्टेंटवाद ने नए मूल्यों की विजय को आसान बनाया।

हाल के कई इतिहासकारों ने दावा किया है कि पूंजीवाद के उदय का धर्म से कोई लेना-देना नहीं था और यह मध्यकालीन इटली, दक्षिणी जर्मनी और जैंटाइन में पूर्ण रूप से मौजूद था। धर्मसुधार आंदोलन युग के प्रमुख पूंजीपति रोम के प्रति वफादार रहे। 1545 में केल्विन बहुत ही अनिच्छा से नाममात्र का ब्याज लेने की इजाजत देने के लिए सहमत हुए लेकिन वह लोभ के सभी रूपों के खिलाफ थे। धर्मसुधार और धर्मसुधार के बाद के प्रोटेस्टेंटवाद में धन कमाना कोई ऐसी बात नहीं थी जो ईश्वर को प्रिय हो। 'व्यवसाय' के सिद्धांत का सार केवल यह दरशाना था कि ईश्वर की सेवा करने के लिए मनुष्य को यह संसार छोड़ने की आवश्यकता नहीं है लेकिन यह कभी भी सुझाव नहीं दिया गया कि उनका दैनिक कार्य केवल लाभ कमाने के लिए किया जाना चाहिए। यह भी कहा जाता है कि वाणिज्यवाद नीदरलैंड्स में केल्विनवाद के पहुंचने के बहुत पहले से ही पूरी तरह संस्थापित था। यह भी बात ध्यान देने योग्य है कि कैथोलिक फ्रांस में जॉक कोएट और जर्मनी के कैथोलिक क्षेत्र में फ्यूगर परिवार उन्नति कर रहे थे।

पी. गॉर्डन वाल्कर का दावा है कि पूंजीवाद में तेजी मूल्य वृद्धि के कारण आई जिससे औद्योगिक क्रांति का आगमन भी जल्द हुआ।

कहा जाता है कि केल्विनवाद ने वित्त, उद्योग और वाणिज्य के विकास को प्रभावित किया। स्टीफेन जे. ली कहते हैं कि यह मुख्य रूप से इस वजह से था कि केल्विनिस्ट्स एक

अल्पसंख्यक समूह के रूप में पाते थे कि देश के कानून के द्वारा या सामाजिक अलगाव के जरिए उनसे भेदभाव किया जाता है और व्रतदीक्षा में प्रवेश से उन्हें रोका जाता है। उन्हें व्यापार या विनिर्माण के निजी उद्यम के लिए मजबूर किया जाता था। उन्होंने अपना प्रसार व्यापारिक केंद्रों में किया। ये केंद्र ग्रामीण क्षेत्रों में अधिक संपन्न थे। नीदरलैंड्स और इंगलैंड में उनका स्वागत किया गया जहां उन्होंने आर्थिक विकास में योगदान दिया।

अंत में ई. ज्योफरी फ्रेंच के विचारों से हम यह निष्कर्ष निकाल सकते हैं कि प्रोटेस्टेंटवाद और पूंजीवाद को जोड़ने का कोई ठोस कारण नहीं है। न तो यह विचार कि 1600 के बाद की सदियों को परिभाषित करने वाली भौतिक संवृद्धि और वाणिज्यिक उद्यम में आई तेजी उस नए विचार से उत्पन्न थी जिसने प्रोटेस्टेंटवाद को उत्पन्न किया था (वेबर) न ही इस विचार के कोई प्रमाण हैं कि पूंजीवाद ने खुद को तमाम बंधनों से मुक्त करने के लिए ईसाइयत के प्रोटेस्टेंटवादी रूप की विचित्रताओं का दोहन किया (टॉनी)।

प्रमुख घटनाएं

1381	:	इंगलैंड में किसान आंदोलन और इसका जॉन वाइक्लिफ को समर्थन।
1415	:	जॉन हस को उनके धार्मिक विचारों के लिए बेदी पर जिंदा जला दिया गया।
1414–1418	:	कांस्टेंस की परिषद।
1431–1449	:	बास्ल की परिषद।
1504	:	इरेस्मस द्वारा *हैंडबुक ऑफ क्रिश्चियन सोल्जर* का प्रकाशन।
1509	:	इरेस्मस ने *प्रेज़ ऑफ फॉली* लिखा।
1517	:	मार्टिन लूथर ने *नाइंटी फाइव थीसिस लिखा।*
1520	:	पोप लियो दशम ने लूथर को कैथोलिक धर्म से निकाल दिया।
1521	:	लूथर की भर्त्सना करने के लिए चार्ल्स पंचम द्वारा 'डाइट ऑफ वॉर्म्स' बुलाई गई।
1524–1526	:	जर्मन किसान आंदोलन।
1520–25	:	ज्यूरिख में ज्विंगली का धर्मसुधार आंदोलन।
1530	:	डेट ऑफ आग्सबर्ग। सम्राट चार्ल्स पंचम ने साम्राज्य को सुदृढ़ करने के लिए, उन्हें मिलाने के लिए कैथोलिकों और लूथर के अनुयायियों को बुलाया लेकिन यह असफल रहा।
1529–1534	:	इंगलैंड की संसद ने हेनरी अष्टम के धर्मसुधार को कार्यान्वित किया। अनेक कानूनों के परिणामस्वरूप रोम के साथ संबंध विच्छेद और इंगलैंड के चर्च पर हेनरी का आधिपत्य हो गया।

अध्याय पांच

निरंकुश राज्यों का उदय

पंद्रहवीं सदी के अंत में मध्यकाल से आधुनिक काल में संक्रांति का एक महत्वपूर्ण दौर आरंभ हुआ। उस समय यूरोप 500 से भी अधिक विकेंद्रित सामंती राज्यों में बंटा हुआ था। सामंती अर्थव्यवस्था के संकट से महत्वपूर्ण परिवर्तन आए। ये परिवर्तन खास तौर पर परिवर्तनशील समाज की संरचना और राज्य निर्माण के विकास के बीच संबंध में देखे जा सकते थे। साथ ही नगरों और ग्रामीण क्षेत्रों के बीच शक्ति संबंधों में भी परिवर्तन आए। बाद में इसने उनके सापेक्ष सरकारों के साथ संबंधों को भी प्रभावित किया। ग्रामीण क्षेत्रों में सामंतों और उनके परिचरों की स्थानीय अवपीड़क शक्ति में परिवर्तन आया। साथ ही राज्य ने शक्ति के प्रयोग पर एकाधिकार करना और सामंतों की आर्थिक शक्ति को दबाना आरंभ किया। इस अवधि में खास तौर पर पश्चिमी यूरोप—फ्रांस, इंगलैंड और स्पेन में शक्तिशाली केंद्रित राजतंत्रों का उदय हुआ। शासन का यह रूप निरंकुश तंत्र कहलाया (अपने आरंभिक दौर में यह नव राजतंत्र अथवा पुनर्जागरण राजतंत्र भी कहलाता था)।

सोलहवीं सदी का निरंकुशतावाद सभी जगह समान रूप में उपस्थित नहीं हुआ, यद्यपि इसका सामाजिक आधार कमोबेश समान था। यह मध्यकालीन सामंती राजशाही से उत्पन्न हुआ, जिसकी शक्तियां जागीरदारों, गिरजाघरों, अर्द्ध-स्वतंत्र प्रांतों और नगर निगमों के विधायी और न्यायिक अधिकारों द्वारा सीमित कर दी गईं। ये शक्तियां अलग-अलग राज्यों में अलग-अलग नामों से जाने जाने वाली संस्थाओं जैसे फ्रांस में इस्टेट्स-जेनरल, जर्मन राज्यों में डेट, इंगलैंड में पार्लियामेंट और स्पेन में कोर्तेस को दे दी गई। इसके अलावा राजा के आदेश काफी हद तक सैनिकों और प्रशासकों की सहायता पर निर्भर करते थे जो उन्हें जागीरदारों और सामंतों द्वारा मुहैया कराए जाते थे। इतना ही नहीं, मध्यकालीन शासकों की शक्ति पोपों और पवित्र रोम के सम्राटों द्वारा उन पर लगाए गए चर्च संबंधी प्रतिबंधों द्वारा भी सीमित कर दी गई थी। निरंकुश शासकों ने स्थायी सेना तैयार करके और शाही नौकरशाही का निर्माण करके अपने सीधे नियंत्रण के जरिए सभी सत्ता अपने हाथों में केंद्रित करनी शुरू कर दी। उन्होंने स्वतंत्र रूप से कर वसूलना और अपनी नीतियां स्वयं बनाना शुरू कर दिया। इन सभी परिवर्तनों से सामंती राज्यों के भौतिक, सैन्य, प्रशासनिक और वैधानिक पहलुओं में बदलाव आया। राजा के दैवी अधिकार का सिद्धांत निरंकुशतावाद को नैतिक औचित्य